षष्ठ- अध्याय

मृणाल पाण्डे के निबन्धों एवं अन्य विधाओं में स्त्रीं विर्मश:-

मृणाल पाण्डे के निबन्धों एवं अन्य विधाओं का विवरण इस प्रकार है-

निबंध-

(1) परिधि पर स्त्री

(2) स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक

(3) जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं

(4) ओ उब्बीरी

(5) स्त्री लम्बा सफर

(6) ध्वनियों के आलोक में स्त्री

अन्य विधाएं-

सम्पादन-

(1) पाण्डे मृणाल- बंद गलियों के विरुद्ध, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली।

(2) **पाण्डे मृणाल- बोलता लिहाफ़,** (2001), **राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली।**

पत्र/ पत्रिकाएं-

(1) दैनिक हिंदुस्तान

(2) अमर उजाला

(3) वामा (पत्रिका)

(4) कादम्बिनी (पत्रिका)

(5) नन्दन (पत्रिका)

मृणाल पाण्डे का निबन्धात्मक लेखन नारी-विमर्श की तस्वीर उपस्थित करता है। वह मुद्दों की पड़ताल तो करता ही है साथ ही नारी जीवन की विसंगतियों एवं नारी विमर्श पर बयानबाजी करने वालों का भी मूल्यांकन करता है। शोधपरक लेखन केवल मृणाल पाण्डे के साहित्य में मिलता है यही कारण है कि इनका लेखन गोष्ठियों, सभाओं, आदि में आज भी चर्चा का विषय बना हुआ है। किताबी ज्ञान से दूर हटकर जमीनी हकीकत को बयां करने वाला, स्त्रियों से मिलकर, गली-गली, गाँव-गाँव जाकर स्त्रियों की समस्याओं को अपने साहित्य में स्थान देकर मृणाल पाण्डे ने नारी-विमर्श को नयी दिशा दी है। जब आज पूरा विश्व स्त्री मुद्दों की पहचान कर रहा है, स्त्री आन्दोलन हो रहे हैं वहीं मृणाल पाण्डे स्त्री जीवन के सघर्षो एवं कुर्बानियों की कहानी को बड़े गर्व के साथ लिख रही हैं। एक वक्त था कि स्त्री चुप थी पर आज वह चुप रहने वाली नही है, अपनी चुप्पी को तोड़कर अधिकार एवं हक के लिए आगे बढ़ चुकी है। अपने वैचारिक लेखन में मृणाल पाण्डे ने स्त्रियों के पराधीनता, उनके जीवन वैविध्य की कहानी को अपने साहित्य में समेट लिया है। मृणाल पाण्डे ने नारी-विमर्श पर कई निबन्धात्मक पुस्तकें लिखी हैं जिसमे पहला है-

(1) परिधि पर स्त्री- इस पुस्तक का पहला संस्करण (1996 ई0) में प्रकाशित हुआ। कुल छोटे-छोटे बीस निबन्धात्मक लेख है। ये लेख स्त्री विमर्श के मुद्दों तथा विसंगतियों को प्रस्तुत करते हैं। लगभग 109 पृष्ठों में लिखी गई यह पुस्तक नारी-विमर्श की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, संस्कृतिक,

भौगोलिक, राष्ट्रीय परिदृश्य को रेखांकित करती है। पुस्तक के प्रारम्भ में लेखिका का मंतब्य है कि मै सबकी बातें चुपचाप सुनती हूँ। जब कोई प्रश्न करता तो वह हर कटूक्ति के बाद व्यंग्य से कहता है क्यों? लेखिका का भी मानना है कि ऐसे प्रश्न पूछने वालों की मै उपेक्षा नही करती। प्रश्नकर्ता तो स्वतंत्र है वह कुछ भी प्रश्न पूंछ सकता है उसे तो अपनी बातें उड़ेलने के लिए एक जोड़ा चर्चित कान चाहिए। मृणाल पाण्डे ने कुछ ऐसे प्रश्नो का विवरण भी दिया है जो इस प्रकार है-

(1) औरत ही औरत की दुश्मन होती है।

(2) सारी फेमिनिस्ट औरतें तर्क-विमुख होती है और पुरुषों से घृणा करती हैं।

(3) नारी-संगठन बस नारेबाजी और गोष्ठियों का आयोजन भर करते है। गाँवों में कोई रुचि नही उनकी।

(4) मध्यवर्ग की शहरी कामकाजी औरतें काम तो क्या मटरगश्ती करने को जाती है? घर-बच्चे भी इसी से टूट जाते है।

(5) जो लड़कियां ससुराली शोषण और सड़कों पर छेडछाड़ की शिकायत करती है, एडजस्ट करना नहीं जानती।

नारीवाद के कई ऐसे प्रश्न स्त्रियों के भविष्य का खाका प्रस्तुत करते हैं चाहे वह पढ़ी-लिखी औरतें हो या कामकाजी। स्त्री-पुरुष का आकलन करते हुए वे मानती हैं कि दोनो मनुष्य हैं। मृणाल पाण्डे कहती हैं कि- "मैं

भी तो किसी दूसरे के विश्लेषण पर सौ-फीसदी यकीन नही कर सकती। उससे आशिंक तौर पर ही सहमत होती हूँ। मेरी राय में तुरन्त सौ फीसती सहमति में मुड़िया हिलाने वालों से वैसे भी भरोसेमंद घनिष्ठता नही बन सकती। क्योकि अततः वे या तो पाखण्डी-काइंया निकलते है, या अव्वल दर्जे के मूर्ख।"[1]

इस पुस्तक का पहला लेख **'मन न रॅगाए, रॅगाए जोगी कपड़ा'** है। इस लेख में मृणाल पाण्डे ने पुरी के शंकराचार्य स्वामी निश्चलानन्द पर व्यंग्य किया है। पुरी के रहने वाले स्वामी निश्चलानन्द एक सार्वजनिक सभा में स्त्रियों द्वारा वेदपाठ को अनुचित करार देकर अपने उस पुरुष मानसिकता वाले विचार तथा भाव का परिचय दे दिया। कुछ समय पहले कलकत्ता विश्वविद्यालय के परिसर में आयोजित एक उत्सव का श्री गणेश सुश्री अरुधंती राय ने वैदिक ऋचाओं के साथ किया, पर जैसे ही अरुधंती राय ने मन्त्रों का उच्चारण किया तो उस आयोजन के मुख्य अतिथि शंकराचार्य जी ने तुरंत आग बबूला हो एक दूत भेजकर विरोध जताया और कहा कि यदि मेरी उपस्थिति में एक स्त्री वैदिक मन्त्रों का पाठ करती है तो वे उठकर चले जाएगें। बात यहाँ तक पहुँच गयी कि आयोजको ने सुश्री अरुधंती राय जी को वेदपाठ करने से मना कर दिया। पितृसत्तात्मक समाज में आज ऐसा ही हो रहा है। कुछ पढ़े-लिखे लोग भी स्त्रियों की उन्नति नही देखना चाहते वे उन्हे हमेशा की तरह घर के चौखट के अन्दर बांध कर रखना चाहते हैं। उनकी निगाह में स्त्री कुछ नही है। समाज में रहने वाले ऐसे

लोग यदि स्त्रियों के साथ ऐसा बर्ताव करेगे तो कम पढ़े-लिखे लोगों की बात ही क्या है? जिस स्त्री शिक्षा के लिए सरकार तथा समाज आज सक्रिय है उसी समाज में ऐसे दूषित मानसिकता वाले लोग यदि पनपेगे तो स्त्री अपना हक कैसे मांग पाऐगी, वह अपना सम्मान कैसे समझे? कलकत्ता जैसे बौध्दिक एवं प्रखर नगरी में इस घटना के बाद सभी शिक्षित तथा अनुभवी लोगों ने विरोध जताया, इतना ही नही तमाम पत्रकार एंव महिला संगठनों ने इस स्त्री के अपमान करने वाले स्वामी जी के खिलाफ आन्दोलन शुरु कर दिया। इस घटना के आधार पर लेखिका मृणाल पाण्डे का कथन है कि- "पुरी के शंकराचार्य इस बात से अनजान हैं कि अपने यहाँ मंत्रदृष्टा स्त्री-पुरुष दोनों के ही लिए ऋषि शब्द का प्रयोग सुक्तों के शीर्षक पर किया जाता रहा है। ऋषि रुप व्याकरण की दृष्टि से भले ही पुल्लिंग हो, परन्तु 'अस्य सूक्तस्य वाग् ऋषि' जैसी घोषणाओं में स्त्री लिंगात्मक वाग् से जुड़कर यह शब्द स्वतः मंत्रदृष्टा स्त्री का द्योतक बन जाता है। ज्ञान के क्षेत्र में पूर्ण समता की अधिकारिणी इन स्त्रियों ने वैदिक ऋचाओं की ही नही नक्षत्र गणना से लेकर गणित के दुरुह सूत्रों तक रचना की है। तब फिर निश्चलानन्द जी द्वारा यह स्थापना देना कि स्त्रियों को वेद पढ़ने का अधिकार ही नही है, क्या यह परम्परा लोकाचार और तर्क सभी का उपहास करना नही है?"[2]

अगले दिन स्वामी जी ने अपना तर्क दिया कि उन्होने ऐसा इसलिए कहा कि वेदपाठ करने के लिए स्त्रियों को यज्ञोपवीत जरुरी है। यदि वे यज्ञोपवीत धारण करती हैं तो उन्हे एक वस्त्र होकर हर जगह भीख मांगना पड़ेगा, इस कारण वे स्त्रियों को वेदपाठ की इजाजत नही देते। इसके पीछे लेखिका का मानना है कि लगता है स्वामी जी ने अपने राजसी कार में बैठकर कलकत्ता में शाम को यह नही देखा कि न जाने कितनी स्त्रियां अपने अधमरे बच्चे टांगे एकवस्त्रा, गृहहीन, तिरस्कृता ऐसे सैकड़ो महिलाओं की भीड़ भीख मांग ने को मजबूर है।

गरीबी का महिलाकरण- नामक लेख में लेखिका ने तीन प्रान्तों की तीन महिलाओं की गरीबी का जिक्र किया है। वे गरीब है, शोषित है, तथा स्वयं अपना व्यवसाय चलाकर कार्य करती हैं। अपने मेहनत के बल पर वे अपने परिवार का खर्च चलाती हैं, यहाँ तक कि दिन रात काम करके अपने व्यवसाय को आगे बढ़ा रही हैं। उनका अपना स्वयं का रोजगार है। अपने साथ मुहल्लें की स्त्रियों को भी काम सिखाती हैं और काम देती है। आत्मनिर्भर भारत की पहचान ये स्त्रियाँ स्वयं व्यवसाय चलाकर समाज के लिए एक सन्देश भी देती हैं कि हमे अपने आप पर भरोसा रखना चाहिए। चूंकि मृणाल पाण्डे का लेखन शोध परक है इसलिए उन्होने जांच-पड़ताल कर स्त्रियों का व्यौरेवार वर्णन किया है। एक पत्रकार होने के नाते रिपोर्टिंग करके, उनसे उनके बारे में जानकारियां लेकर तथ्यपरक वर्णन किया है। पहला वर्णन कर्नाटक के कन्नौर जिले की 58 वर्षीया विधवा सुब्बलक्ष्मी

का विवरण दिया है। सुब्बलक्ष्मी अगरबत्ती बनाती हैं। दूर गाँव से एक ठेकेदार आकर उनके जैसे कई महिलाओं को अगरबत्ती बनाने का कच्चामाल यानी तीलियां एवं पिसा मसाला देकर चला जाता है। सुब्बलक्ष्मी तीलियां बनाती है फिर वह ठेकेदार आकर कम दाम पर अगरबत्तियां लेकर चला जाता है। पहले युवावस्था में सुब्बलक्ष्मी ज्यादा तीलियां बनाती थी पर कुछ समय बाद उम्र के साथ कार्यक्षमता भी घटने लगी। हमारे देश में तमाम ऐसे ठेकेदार हैं जो कामगार स्त्रियों को मेहनत से लेकर हर तरह का शोषण करते हैं। स्त्रियां काम भी अधिक करती है, लेकिन मेहनताना कम मिलता है। ठेकेदार फैक्ट्री का चस्पा लगाकर ठेकेदार अधिक धन कमाते है परन्तु स्त्रियों को उसके बदले बहुत कम धन मिलता है। मृणाल जी ने शोषण की इस दशा को कामकाजी स्त्रियों के परिप्रेक्ष्य में दिखाया है।

दूसरा उदाहरण लेखिका ने मध्यप्रदेश के कलमाड़ी गाँव में अनु.जनजाति की सुखीबाई तथा उनके जैसी कामगार स्त्रियों का किया जो बांस की टोकरियाँ बनाती हैं और बेंचती हैं। औरतों का यह पेशा भी है और उनके परिवार का खर्च भी चल जाता है। बहुत पहले ये औरतें बांस की टोकरियां सीधे ग्राहकों को बेचती थी पर अब नये कानून के अनुसार वे सीधे ग्राहकों को नही दे सकती। जंगल में बांसो पर प्रतिबंध सरकार ने लगा दिया है इसलिए टोकरी बनाकर ये औरतें सीधे दलालों को बेचती हैं। ये दलाल 3 या 5 रुपए में खरीद कर दस रुपए में मार्केट में बेचते है। यहाँ दलाल बिना मेहनत का पैसै कमाता है जिसने न टोकरी बनाई और न

जंगल से बांस चुराए। शोषण मात्र स्त्रियों का हो रहा है, वे मेहनत भी करती हैं दूसरे उनको दाम भी कम मिल रहा है।

तीसरा उदाहरण अहमदाबाद की शांता बेन का दिया है जिनके पति कपड़ा मिल में मजबूर थे। मील बन्द होने से शांता बेन दवाइयां पैक करने लगी। उसमे उनको कम मजदूरी मिलती थी। लेखिका ने सुब्बालक्ष्मी, सुखी बाई और शांताबेन जैसे तीन चेहरों का जिक्र किया है वे बिलकुल गरीबी झेल रही स्त्रियां थीं जिनके दायरे तो बढ़ रहे थे लेकिन वे एक जगह कैद होकर रह गयी थीं। आज भी तमाम स्त्रियां टूटी-फूटी झोपड़ियों में रहकर सिलाई, कताई, बुनाई करती हैं लेकिन दुख की बात है वे राष्ट्र की आखों से ओझल हैं। यहां तक कि सरकारी बही खाते में वे गृहिणी बनकर रह गयी है, कामकाजी स्त्रियों में उनकी गणना नही होती।

महिला वोटर- जगना एक सुषुप्त वोट बैंक का- नामक लेखमें लेखिका ने राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी एवं कर्तव्य को दिखाया है फिर भी उन्हे कम आका जाता है। राजनीतिक पार्टियां कम से कम, गिनी-चुनी महिलाओं को चुनाव में टिकट देती है, पुरुषों को ज्यादा दिया जाता है। आज लोकतंत्र में महिला वोटरो की संख्या भी ज्यादा है लेकिन टिकट कम मिलता है। यह भेद भाव पुरुषवादी सोच को प्रकट करता है। स्त्रियां चाहे जितना कार्य करें, या चुनाव में प्रचार करें केवल उनकी यह पार्टियां लाभ लेती है, उनके मूल्य को कम आंकती है। आज के समय में उनकी संख्या

भी सीमित है फिर भी स्त्रियां राष्ट्र में योगदान भी देती हैं और हर कार्य में अधिक भाग भी लेती हैं।

हजार बरस की असमानता क्यों- आज भी स्त्रियों के अस्तित्व एवं अधिकार की बात खूब होती है लेकिन हर क्षेत्र में असमानता बनी हुई है। ऐसा भी नही है कि स्त्रियां जागरुक नही है बल्कि यह कि सत्ता किसी और के हाथ में है। यह तृतीय सत्ता केवल स्त्रियों के वोट बैंक का इस्तेमाल करती है, अपना हथियार बनाती है, अधिकार उनको शून्य भी नही देती। राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक, धार्मिक हर क्षेत्र की असमानता को स्त्री सहन कर रही है। हैदराबाद की 'अन्वेषी' संस्था की रिर्पोट बताती है कि स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा कम मजदूरी मिलती है, इतना ही नही जब मजदूर काम पर से लौटते हैं तो पेट में शराब और जेब खाली होती है। गृहस्थी की जिम्मेवारी स्त्रियों पर है पर पैसा उनके हाथ नही मिला। यदि स्त्रियां, पुरूष का (अपने पति) का विरोध करें तो पिटती हैं। मृणाल पाण्डे कहती हैं कि ये औरते बताती हैं- "हम भी तो वही कष्ट झेलती हैं, जो हमारे मर्द। हम तो शराब में गम नहीं डुबाती। हमे बच्चे पालने है, संसार चलाना है उन्हे भी यह समझना होगा। हमारे मरदों को अड्डा जाने से रोको।"[3]

पुलिस, लोकतंत्र और लोकलाज- इस लेख में लेखिका ने दिखाया है कि किस तरह पुलिस तंत्र स्त्रियों की रक्षा करने में असफल है? लोकतंत्र की रक्षा भी आज कैसे हो रही? एक खबर का हवाला दिया है जिसमें दिल्ली पुलिसके मुख्यालय की चर्चा की गयी है। वहाँ हजारों केस आते है, महिलाएं

शिकायतें करती हैं लेकिन कार्यवाही नही होती। सरकारें भी ऐसी आती हैं कि वे महिलाओं की सुरक्षा एवं योजनाओं का ख्याल नही रखती हैं। स्त्री जीवन की यह विडम्बना है कि आज स्त्री का हर वक्त शोषण हो रहा है। स्त्रियों की स्थिति पर बात करते हुए लेखिका सीमोन द बाउवा कहती है कि- "यह आधी दुनियाँ की गुलामी का प्रश्न है जिसमें अमीर-गरीब हर जाति और हर देश की महिला जकड़ी हुई है। कोई स्त्री मुक्त नही हैं।"[4]

भॅवरी नाम है एक लहर का- इस लेख में मृणाल पाण्डे ने भंवरी नाम की स्त्री के साहस एवं धैर्य का परिचय दिया है। भंवरी कर्मठ भी है, साहसी भी है, स्त्रियों के अस्तित्व के लिए जीवन भर लड़ती रहती है। राजस्थान की बस्सी तहसील के अचर्चित गांव में जाति की कुम्हार भॅवरी बाई एक समाज सेविका थी। सरकारी प्रोत्साहन के कारण बाल विवाह रोकती थी। गैर कानूनी कार्य करने वालों की सूचना सरकार तक पहुँचाती थी। एक वक्त ऐसा आया की समाज में रहने वाले ताकतवर लोग अपनी ताकत के कारण भॅवरी बाई को बदनाम कर दिया। उस पर दोषारोपण किया गया। भॅवरी बाई को झूठा करार देकर उसके पति और बच्चों को जाति-समाज से बहिष्कृत कर दिया गया। इस विषम परिस्थिति में कोई साथ दिया तो वह थी-भॅवरी बाई के साथ काम करने वाली औरतें। भारत में आज भी दूर-दराज गाँवों में यही दशा है। गरीब, कमजोर महिलाएं दबंगो के खिलाफ आवाज नही उठा पाती, यदि वे आवाज उठाती है तो उन्हे प्रलोभन देकर या डरा-धमका कर दबा दिया जाता है।

राजस्थान की भॅवरी बाई डरने वाली महिला नही थी, उसने ऐसे लोगों का विरोध किया। समाज सुधार का जो बीड़ा अपने हाथ में उठाया था भॅवरीबाई ने वह सराहनीय था। यही कारण है कि भॅवरी बाई को क्रान्तिकारी स्त्री कहा गया। मृणाल पाण्डे ने लिखा कि-"अन्याय के आगे टूटना नही, झुकना नही और अपनी सच्चाई पर अड़े रहना है, इसकी एक मिसाल बनकर उभरी है भॅवरी बाई!"[5]

यह तो नारीवाद नही- नामक लेख स्त्रियों की अस्मिता-अधिकार, शिक्षा, बेरोजगारी तथा अस्तित्व पर आधारित है। इस लेख में उच्चपदस्थ महिला अफसरों की स्थिति को दिखाया गया है। जब महिला उच्च पद पर आसीन हो जाती है तब लोग कितना विरोध करते है? जैसे ही वह कुछ नया कार्य करना चाहती है तब एक साथ कई मुँह उसका विरोध करते है। कई उच्चपदस्थ महिलाएँ साक्षात्कार दर साक्षात्कार, चर्चा-परिचर्चा इन पत्रिकाओं में और कार्यक्रमों में यह संदेश देती है कि नारी शक्ति के विकास का अर्थ है-ऊँचा पद मोटी कमाई-तथा बोर्ड में अपनी सत्ता स्थापित करना। आर्थिक व्यवस्था के दौर में पुरुषों को पीछे छोड़ देना।

महिला शरणार्थी की त्रासदी- नामक लेख में लेखिका ने महिला शरणार्थी समस्या को उठाया है। तमाम टी.वी.चैनलों, पत्रों आदि में इनकी समस्या आती है लेकिन उस पर कोई अमल नही होता। ऐसे कई परिवार है जिनमे पुरुष या स्त्री घर छोड़कर गए और नही आए, उनका भी पता कैसै चले इन सब विवरणों को मृणाल जी ने इस लेख मेंव्यक्त किया है? स्त्रियों की

गरीबी तथा उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर इसी समाज के द्वारा गुमराह किया जाता रहा है। मृणाल जी ने स्वयं कहा है कि- "गरीबी तथा डर के कारण शरणार्थी स्त्रियां प्रायः वेश्यावृत्ति करने वालों के चंगुल में आसानी से आ जाती है। आज जर्मनी की सीमा से लेकर कलकत्ता और बैंकाक की गलियों तक ऐसी वेश्याओं की भीड़ लगी हुई है।"[6]

नारी तुम केवल उपभोक्ता हो- यह लेख स्त्री का शोषण तथा उसके साथ हो रहे अत्याचार का उल्लेख करता है। समाज स्त्री को हर स्तर पर प्रयोग करता है। ऐसा लगता है कि आज स्त्री उपभोग की वस्तु बन गयी है। आए दिन स्त्रियों के साथ भेदभाव, छेड़-छाड़ तथा आग में जलाकर मार दी जाती हैं। उपभोक्तावादी समाज में स्त्रियाँ कैसे अपना जीवन जी रही है यह सवाल कौन करे? चाहे कामकाजी औरतें हो, मीडिया में काम करती स्त्री हो, या बाजार में विज्ञापन करती हो। पितृसत्तात्मक व्यवस्था इनका इस्तेमाल तो करती है पर अधिकार नही देता। इनको उपभोग का साधन समझकर जीवन भर फायदा उठाता रहता है।

अ से अर्थजगत, आ से आदमी, औ से औरत- में लेखिका ने अर्थजगत की स्थिति, आदमी यानी व्यक्ति द्वारा स्त्री का शोषण तथा औरत की त्रासदीपूर्ण स्थिति का जायजा प्रस्तुत किया है। किस तरह समाज में व्यक्ति की सत्ता मौजूद है पर एक स्त्री के हाथ में कुछ नही है। यदि स्त्री अपने संघर्ष एवं मेहनत से कुछ प्राप्त करती भी है तो पुरुष उस पर अपना अधिकार जताता रहता है।

नारी तुम केवल टारगेट हो- नामक लेख में स्त्रियों की दिनचर्या तथा उनके जीवन के लक्ष्य को टारगेट किया गया है। चाहे सामान्य स्त्री हो, नौकरी पेशा या कामकाजी औरतें उनकी सुरक्षा, उनकी व्यवस्था पर कोई ध्यान नही देता। एक तरह से कहा जाय कि स्त्रियों पर आज भी तलवार लटक रही है। स्त्रियों की शिक्षा, रोजगार, प्रसूति, तथा जीवन रक्षा का जिम्मा कोई नही लेता यानी स्त्री के उपभोक्तावादी समाज में केवल उपभोग के लिए टारगेट है। स्त्री जीवन की विडम्बनाओं एवं अस्तित्व को लेकर लेखिका सरला महेश्वरी कहती हैं कि-"महिलाएं दुनियाँ की आबादी का आधा हिस्सा है, कुल काम का दो-तिहाई हिस्सा वे करती हैं, लेकिन दुनियाँ की सम्पत्ति के सौवें हिस्से से भी कम सम्पत्ति महिलाओं के पास हैं।"[7]

छोटे पर्दे पर स्त्री- मृणाल पाण्डे ने इस लेख के माध्यम से स्त्री का सबसे बड़ा धन सौन्दर्य है और उसका मुख्य उद्देश्य घर एवं परिवार को खुश रखना है। जिस स्त्री को प्रारम्भ से ही दब्बू, सहनशीलता तथा कायर बताया गया था आज वह सचेत हो चुकी है। वह अपने ऊपर हो रहे अमानवीय अत्याचार को लम्बे अर्से से सहती चलीआ रही हैं। कई पीढियाँ बीत गयी फिर भी वह अपनी सहशीलता तथा धैर्य के कारण इन सबका सामना करते आ रही है। इसके अलावा लेखिका ने सीरियलों एवं फिल्मों में हो रहे स्त्रियों के शोषण एवं भेदभाव का जिक्र किया है। उनको छोटे कपड़ो मेंतथा छोटे पर्दो पर दिखाया जाता है इसके बदले उन्हे कम पैसे भी दिए जाते हैं। स्त्री जीवन की यह विडम्बना स्त्रियों को यह सचेत करती है कि उन्हे अपने

प्रति हो रहे दुर्व्यवहार तथा अन्याय के प्रति सावधान होना होगा। स्त्री को हीन दिखाने में पुरुष ने हमेशा हीन भाषा का प्रयोग किया है परन्तु स्त्री अब सम्पूर्णरूपसे स्त्रियों के प्रति हो रहे भेद-भावको समझ लिया है। स्त्री के अस्तित्व की पहचान करते हुए जयशंकर प्रसाद ने 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में ध्रुवस्वामिनी से कहलवाया है कि- "मै उपहार में देने की वस्तु शैलमणि नही हूँ। उसमें आत्म सम्मान की ज्योति है। उसकी रक्षा मै करुँगी।"[8]

अपराध का सार्वजनिक महिमामण्डन क्यों- इस लेख में लेखिका ने स्त्रियों पर हो रहे अत्याचार तथा दीर्घकालिक शोषण का जिक्र किया है। स्त्री के साथ हो रहे अमानवीय शोषण को यह मीडिया सरेआम न्यूज पेपर या चैनलों पर दिखाता है। इसमें उनकों (मीडिया को) संवेदना कम दिखती है बल्कि अपने न्यूज के प्रचार के लिए मसाला अधिक मिल जाता है। सार्वजनिक तौर पर यह सब दिखाकर मीडिया लोगों से सहानुभूति बटोरना चाहता है मगर यह उचित नही। किसी स्त्री का सार्वजनिक महिमामण्डन करना कितना ठीक है यह कल्पना के परे है पर उसको उचित स्थान दिलाना ज्यादा जायज है। लेखिका ने फूलन देवी जैसी स्त्रियों का खाका प्रस्तुत किया है। एक साधारण स्त्री फूलन देवी अपना जीवन सादगी से जी रही थी परन्तु उसके साथ अत्याचार हुआ, उसका परिवार खत्म कर दिया गया, इतना ही नही उसका शारीरिक, मानसिक शोषण हुआ जिसके चलते वह कुख्यात अपराधी स्त्री की दुनियाँ में प्रवेश कर गयी। वह अपने अधिकार तथा अस्तित्व के लिए लगातार लड़ती रही। तमाम सामाजिक संगठन तथा

समुदाय उसपर सवाल उठाते रहे लेकिन उसके सुधार एवं बचाव का रास्ता न निकाल सके। स्त्री की सुरक्षा तथा सुविधा देने के बजाय शेखर कपूर जैसे लोगो को फिल्म बनाने का मौका भी मिल गया। स्त्री को क्या करना चाहिए, क्या नही करना चाहिए? इसका निर्णय स्त्री के हाँथ से निकल गया।दो टके का वालीवुड या फिल्म इण्डस्ट्री यह बताएगा कि स्त्री कैसे जीवन जिए, यह भी एक विडम्बना ही है?

अंजलि कपूर : नारीवाद और मीडिया का अर्द्धसत्य- लेखिका का यह लेख अंजलि कपूर जैसी स्त्री की विडम्बना तथा उनके साथ हुए मतभेद को दर्शाता है। इतना ही नही साथ ही साथ मदर टेरेसा के माध्यम से नारीवाद की उचित व्याख्या करना भी इस लेख का उद्देश्य है। मदर टेरेसा ने जीवन भर दीन-दुखियों की सेवा की, भगवद भक्ति की लेकिन फिर भी लोग लांछन लगाते रहे। केवल स्त्री की चर्चा करना तथा कुछ छड़ के लिए उसके अधिकार की बात कर देना ही नारीवाद नही है। उसके अस्तित्व तथा स्वंतत्रता की लड़ाई लड़ना नारीवाद केसही मायने है। मीडिया नारीवाद के 'अर्द्वसत्य' को ही दर्शाता है सही रुप को नही दिखाता। मीडिया भी समाज की सच्चाई एवं मूल संवेदना से दूर होता जा रहा है। जीवन की वास्तविकता से दूर होता मीड़िया समाज अब केवल राजनीतिक दाँव-पेंच मेंउलझा रहा है।

पहले भोजन, फिर परिवार नियोजन- लेखिका ने सरकार द्वारा संचालित अन्य योजना तथा परिवार नियोजन जैसी योजनाओं पर भी सवाल उठाया है। यह योजनाएँ औरतों एवं असहाय लोगों के लिए चलाई जाती है पर उन तक कितना पहुँचती हैं? यह सब जानते हैं। सरकार गर्भवती स्त्री, रोगग्रस्त स्त्री के लिए भोजन के साथ-साथ चिकित्सा सुविधा भी उपलब्ध कराए तब कही महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है। परिवार नियोजन पर हमारी सरकार हर वर्ष करोड़ो रुपए खर्च कर देती है पर इस पर कितना काम हुआ, कितना सुधार हुआ इसका जायजा कौन ले? सरकार का तथा सामाजिक संगठनों का यह लचीला रवैया महिलाओं के विषय में ज्यादा अच्छा खाका प्रस्तुत नही करता। महिलाओं की इस स्थिति पर मृणाल पाण्डे लिखती है कि- "स्त्रियों को भरोसा और सदभाव अगर हमारे परिवार नियोजन कार्यक्रमों को मिल गया तो फिर वे सफलता की ओर स्वतः बढ़ निकलेगें। पर स्त्रियों के ऐसे सदभाव को जीतने के लिए सरकार को उनकी प्रजनन-शक्ति के नियोजन की नहीं कल्याण की दृष्टि से देखना होगा-"[9]

दूधो नहाए, लेकिन कृपया पूतों न फलें- यह लेख महिला बेरोजगारी, महिला शिक्षा तथा महिलाओं के विकास के विषय में लिखा गया है। सरकारें तथा नेता केवल झूठे वादे करतेहैं लेकिन महिलाओं के लिए काम नही करती। राजनेता बड़े-बड़े मंत्र देते है, उपदेश देते है लेकिन कोई हल नही निकालते। महिलाओं की स्थिति का सही जायजा नही लेते केवल आगे बढ़ने की सीख देते है। महिला विकास तथा नारी उत्थान अब केवल फैशन हो गया है।

इसके लिए कार्यक्रम भी खूब होते है पर सुरक्षा एवं अधिकार नही मिल पाते।

विश्व की सबसे बड़ी चिन्ता आबादी नियंत्रण- नामक लेख में लेखिका ने विश्व की बढ़ती आबादी पर मंथन किया है। लेखिका का मानना है कि जिस स्तर से विश्व की जनसंख्या बढ़ रही है उसमें भी महिलाओं की सख्या आधी है फिर भी उनकी स्थिति में सुधार बहुत कम हो रहा है। सरकारें जनसंख्या नियंत्रण फार्मूले लागू करती हैं लेकिन उनका कड़ाई से पालन नही होता। जिस गति से जनसंख्या बढ़ रही है उस स्तर से देश में सुविधाएं नही उपलब्ध हो रही इसलिए जनसंख्या को निश्चित करना सरकार की जिम्मेवारी है। यदि ऐसा न हुआ तो आने वाले समय में आर्थिक एवं सामाजिक, पर्यावरणीय संकट खड़ा हो जाएगा।

क्या बारामूडा त्रिकोण है हिन्दी पट्टी- इस लेख में स्त्रियों की स्थिति को उच्च बताते हुए समस्याओं पर नजर डाला गया है। स्त्रियां आगे बढ़ना तो चाहती है पर शिक्षा, रोजगार, गरीबी तथा कामकाज की समस्याएं उन्हे आगे बढ़ने नही देती। यदि इस पर विचार नही हुआ तो महिलाओं की दशा में सुधार कैसे होगा?

त्रिभुज के बारे में सोचते हुए- महिलाओं की दशा अब ऐसे त्रिभुज के घेरे में हैं जहाँ वह केवल पुकार कर रही है। वह अपनी दशा एवं दिशा को सम्भालना चाहती है मगर मार्ग में कई अड़चने है। समाज में पुरुषो की सामाजिक एवं मानसिक अराजकता का शिकार स्त्रियां ही रही है। उतने पर

भी शिक्षा एवं स्वास्थ्य निजि संगठनों एवं संस्थाओ के हाँथमें चले जाने से सबसे बड़ी मार स्त्रियों पर ही पड़ रही है। स्त्रियां अपनी आर्थिक स्थिति के बल पर आगे जा सकती है। अब वे स्वयं बिजनेस या कामकाज में आगे पैर बढ़ा रही हैं। बैंको से कर्ज लेकर अपने काम-काज को सुचारु रुप से चला रही हैं। चाहे मछली पालन हो, दुकान हो, मिट्टी के खिलौने बनाना हो या छोटे घरेलू उद्योग हो। इन सब के माध्यम से स्त्रियां आगे बढ़ रही हैं और आने वाले समय में स्त्री चेतना को नई लीक पर ले जा रही हैं।

(2) स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीतिक तक-

मृणाल पाण्डे की यह पुस्तक जीवन की गतिविधियों को उजागर करती है। आखिर में स्त्री अपने शरीर,सौन्दर्य एवं शक्ति के बल पर देश की राजनीति का सफर किन-किन पायदानों के माध्यम से तय करती है? लगभग 130 पृष्ठों में लिखी गयी यह पुस्तक स्त्री-विमर्श के नजरिए से एक निबन्धात्मक लेख है जिसमें कुल 23 छोटे-छोटे लेख है। इस पुस्तक का पहला संस्करण (1987 ई.) में छपा। लेखिका का उदगार पुस्तक के नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि स्त्री किस तरह देह और राजनीति तक ही आँकी जा रही है? घर-परिवार की चहारदीवारी में काम करनेवाली स्त्री बाहर की दुनिया में केवल राजनीति ज्ञों का घोषणापत्र बनकर रह गयी है। इसी पुस्तक में स्नेहमयी चौधरी स्त्री जीवन की सच्चाई को बड़े सलीके के साथ कहती हैं-

ऐसा खतरनाक जीवन
जीते हुए,
क्या अपने को बहुत देर तक
संभाल पाना आसान है?
बाहर आने पर भी तोइत नाही
लहुलुहान होते है,
जितना अन्दर रहने पर---(स्नेहमयी चौधरी,पृष्ठ18)

इस पुस्तक का पहला पड़ाव '**निजमन मुकुर सुधारि**' में स्त्री के अस्तित्व' की खोज शुरु कर ना मार्मिक उद्देश्य है, साथ ही साथ कई प्रश्न भी मिलते है जैसे-मैं कौन हूँ, क्यों हूँ? इस संसार में या इस सृष्टि में मेरी क्या जगह है? मेरा आदि और अन्त क्या है? इस संसार में अब्राहम लिंकन से लेकर तिलक गोखले जैसे महापुरुषों नेहर मनुष्य को,,,,,स्वाधीन होना जन्मसिध्द अधिकार बताया है फिर स्त्री पर सामाजिक, पारम्परिक बंधन क्यों लादे गए है? जब पशु-पक्षी भी स्वाधीन जीवन जीना चाहता है तो हम कैसे कह सकते है कि दुनियां की आधी आबादी कही जाने वाली स्त्रियाँ इस पड़ाव में क्यों पीछे है? इस समाज में स्त्री-पुरुष के बीच विषमता का जो असुन्तलन व्याप्त है, यह केवल एक खास वर्ग को लाभ पहुचाने के लिए है जिसमें सबसे अधिक नुकसान स्त्रियोंको हुआ है। यह असुन्तल न कुदरती या दैवी कारणों से नही उपजा बल्कि ठोस भौतिक लाभ बढ़ाने के लिए पितृसत्ता स्त्रियों का शोषण करती है और इसे स्थायी बनाने के लिए साम-दाम-दण्ड-भेद का भरपूर उपयोग किया गया। इसी पुस्तक की भूमिका में मृणाल पाण्डे कहती हैं कि- "लोग स्त्री-मुक्ति के समर्थन की ओट लेकर नौकरियों में स्त्रियों के लिए आरक्षण और

दहेज विरोधी जैसी बातें जरूर करते हैं पर उस वक्त उन के मन में स्त्री का अर्थ मात्र अपनी बेटियों (प्रायःबहुए भी नही) तक ही सीमित होता है। ग्रामीण क्षेत्रों की यात्रा के दौरान मैने पाया है कि कही स्त्रियों को काम देने के बहाने मात्र डेढ़-दो सौ रुपये माह का मानधन रुपी फन्दा गले में डालकर देश के कई राज्यों में आँगनबाड़ी, बालबाड़ी की महिला कार्यकर्ताओं से कठोर श्रम कराया जा रहा है, तो कहीं सिलाई-कटाई की उपकरण विहीन कक्षाएँ खोलकर 'ट्राइसेम' या आई.आर.डी.पी. जैसी गरीबों के विकास के लिए बनी योजनाओं का भरपू र आर्थिक दोहन किया जा रहा है।"[10]

स्त्री को सदैव अपना मानने के बजाय बाहरी (खतरनाक किस्म या हीन भावना) के तौर पर देखा गया। समय-समय पर घटिया किस्म की बयानबाजी भी होती रही। किसी भी कवि, आलोचक, लेखक, पत्रका र ने स्त्री को असहाय की दृष्टि से देखा जबकि अवसर आने पर पुरुष का साथ स्त्री ने ही दिया। किसी ने आँचल में दूध और आँखों में पानी लिखा, किसी ने महाशक्ति कहा, किसी ने पाप का घर तथा माया कहा। स्त्री के संसार को सीमित करने लिए बचपन से ही उसे दब्बू बनने की शिक्षा दी जाती रही। कहा गया कि तुम लड़की हो ये नही कर सकती। ज्यादा मत खाओ, अकेले मत घूमो, कम बोलो आदि चेतावनी बचपन से ही दी जाती है। जीवन में बिना कुछ सोचे जिसने जो स्त्री के बारे में बात कही है वह पूरे समाज पर एक सवाल खड़ा करता है-

ओ स्त्री देह
मै एक सहज सुरंग था,
* * * * * * * * * * * *
तब महज खुद की रक्षा करने को,
मैने तुझे अपना हथियार बना डाला।

इसी पुस्तक में लेखिका ने फिल्म की दुनिया में काम कर रहीं अ भिनेत्रियों का जिक्र किया है जिसमें वे अपनी फिल्में बिकवाने के लिए कई नायिकाएं अपने प्रोडयूसरों के अनुसार काम करती है। भाग-दौड़ की जिन्दगी में वे निर्देशकों के खिलाफ नही जाना चाहती। इतना ही नही प्रोड्यूसरों के अनुसार, पहनावा, खान-पान तथा जीवन जीना शुरु कर देती हैं जिसका वे खुलकर विरोध भी नही कर सकती। नारी मुक्ति आन्दोलन का घोड़ा यहाँ दब गया है। जो स्त्रियाँ जाकेट, सूट और बूट पहनकर आधुनिक होने की जद्दोजहद में लगी हैं। उनको यह भी महसूस होता है कि हम आधुनिक है मगर यह आधुनिक ता नही बल्कि स्त्री पर किया गया छलावा है। कुल मिलाकर यहाँ पुरुष और बाजार दोनों स्त्री का शोषण कर रहे हैं और उस पर अपना प्रयोग कर पैसा कमा रहे हैं, लेकिन जिस दिन स्त्री इस पूँजीवादी मानसिकता को समझ जाएगी उस दिन बाजार के साथ-साथ रइसजादों की दुकान भी बन्द हो जाएगी। धर्म और मर्यादा में जकड़कर स्त्री पर घिनौने प्रयोग किए जा रहे हैं है। धर्म अपनाने एवं धार्मिक मान्यताओं के आधारपर बहकाने का तजुर्बा आज शायद ज्यादा आसान हो गया है। स्त्री को तो पहले ही बता दिया गया है कि तुम्हे तो धार्मिक होना चाहिए, तुम्ही धर्म की रक्षा कर सकती हो यानी कुलमिलाकर सारे व्रत, उपवास, मर्यादा की बेड़ियाँ केवल स्त्री के ही पापों के लिए बनी है पुरुष

केवल इस अवसर का लाभ उठाता है। आज भी हमारे समाज में जो समृध्द (कुलीन) घर की औरतें हैं उनकी पहुँच विलायत में बैठे बड़े-बड़े धर्म के ठीकेदारों तक है, उनके बहकावे में आकर स्त्रियाँ उनकी शोषण की मानसिकता को नही समझ पाती जबकि मध्यवर्गीय परिवार या गरीब घरों की स्त्रियाँ नीम, पाकड़, बरगद, केला के वृक्षों की पूजा करके आर्शीवाद प्राप्त करती हैं। कम पढ़ी-लिखी स्त्रियां ज्यादा धार्मिक चपेट में नही आती फिर भी धर्म के आगँन में स्त्री पर आए दिन अत्याचार होते है। कर्मकाण्ड, लोकगीत, लोकाचार और अपने दब्बू स्वभाव के कारण स्त्रियां स्त्री हीनता का शिकार हो जाती हैं। क्या कारण है कि भारत में धर्म के नाम पर ज्यादा स्त्रियाँ ही शोषण का शिकार होती है? यह एक सवाल नही बल्कि मानवीय मूल्यों के प्रति हमारे समाज की उदासीनता है। स्त्रीऔर पुरुष दो वर्गो में विभाजित यह समाज मानव मन की गहराइयों में एक सुराक बना देता है जहां मनुष्य जीवन ही जीता बल्कि घुटन महसूस करता है। मुक्तिबोध का कहना है कि- "एक विभाजित समाज में व्यक्ति का मन भी विभाजित होता है।"[11]

स्त्री अपनी रुढ़िबध्द छवियों को नकारकर अपने अस्मिता की पहचान के लिए शिक्षा और जीविकोपार्जन की तलाश करती हैं। यही वह मानदण्ड है जिसमें उसका संसार सुरक्षित है । स्त्री जब इन्हीं पहलु ओं के तलाश के लिए संघर्ष करती है तब वह सहसा जीवन की सच्चाई को रेखाकिंत करना चाहती है। स्त्री कभी विरोध नही करती लेकिन जब कोई मान्यताएं उसके खिलाफ जाती है तब वह अपने स्वाभिमान की पहचान के लिए अपनी स्वाभाविक लीक से हटकर समाज को दिशा भी दिखाना चाहती है।

दो खण्डों में विभाजित इस पुस्तक में पहला लेख **'निज मन मुकुर सुधारि'** है। मृणाल पाण्डे जी ने इस लेख में स्त्री के अस्तित्व की तलाश एवं समाज में उसके स्थान को निर्धारित किया है। स्त्री अपने सम्मान के लिए स्व की तलाश कर रही है। समाज में स्त्री की मूल धारणा नकारात्मक भले ही रही हो लेकिन स्त्री भी कह रही है कि-मुझे जीवन बाँचना है/ मुझे भी तोड़ना है शिव का धनुष (बानीरा गिरि)। लोगों के द्वारा भले ही यह कल्पना की जाय कि आत्मनिर्भर स्त्री में अपने घर-परिवार के लिए प्यार या चिन्ता नही होती, परन्तु यह कितना यथार्थ है यह सब जानते है?, स्त्री अपने सहज धैर्य एवं प्रेम की क्षमता के बल पर सन्तुष्टपरक जीवन का उदाहरण प्रस्तुत करती है। वह एक मिशाल पेश करती है, यथार्थपरक मानव जीवन का। स्त्री के कारण रिश्ते कभी नही टूटते, रिश्ते जब टूटते है तो पुरुष के बनावटीपन के कारण। स्त्री पुरुष की समानता तब होगी जब मै और तुम की धारणा खत्म होगी। यदि ऐसा नही है तो फिर दोनों में यह द्वन्द्व चलता रहेगा।

तलहटी का अकेलापन में स्त्री के 'शक्ति एवं शोषण' के चर्चे मिलते हैं। लिंग, जाति, परिवार, समुदाय, वर्ण-धर्म इन इकाइयों का जो क्रम है इन सब में पुरुषों का पक्ष मजबूत रहा है। इतना ही नही हम इतिहास में भी पढ़ते-सुनते आए है कि जब-जब अच्छे एवं सहज कार्यो को करना होता था तब पुरुष उसे अपने हाथ में ले लेता था। कठिन काम हमेशा से स्त्रियों के पाले में झोक दिए जाते थे। उतने पर भी कहा जाता था कि स्त्रियाँ

कमजोर होती है, इनमे मानसिक परख भी कम होती है, बुद्धू होती है। काम की कठिनता एवं संघर्ष परक उत्तरदायित्व स्त्रियों को ही झेलने पड़े हैं। मुख्यतः समाज दो वर्गों में विभाजित हो गया, जिसमें एक पुरुष वर्ग जो सबल था, दूसरा स्त्री वर्ग जो कमजोर माना जाता था फिर भी सम्पूर्ण कठिन काम स्त्रियों के मत्थे मढ़ दिया जाता था, वही धारणा अब भी चली आ रही है। इसमे सुधार कब होगा इसका आकलन लगाना थोड़ा मुश्किल जरुर है लेकिन संभव जरुर है। स्त्रित्वबोध के विषय में बड़ी सादगी एवं बेबाकी से महादेवी वर्मा ने लिखा है कि- "जो देश के भावी नागरिकों की विधाता है, उनकी प्रथम एवं परम गुरु है, जो जन्मभर अपने आपको मिटाकर दूसरो को बनाती रहती हैं, वे केवल तभी तक आदरहीन मातृत्व और अधिकार शून्य पत्नीत्व स्वीकार करती रह सकेगी जब तक उन्हे अपनी शक्तियों का बोध नही होता। बोध होने पर बंदिनी बनाने वाली श्रृंखलाओं को तोड़ फेकेगी।"[12]

लेखिका का मानना है कि जो लोग स्त्री की नियति का मूल्यांकन करते हैं उनको समझना चाहिए कि स्त्री अपना कैनवास स्वयं निर्धारित करती है, उसे किसी के विचार या सलाह की जरुरत अब नही है। आगामी वर्षो में यदि स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के विषय में लोगो की धारणा नही बदली तो फिर सामाजिक रिश्तों में दरार बनती चली जाएगी। इतना ही नही अगर स्त्री पुरुषों की तरह कार्य करने लगे या पुरुष की तरह जुल्म और प्रतिकार

ढ़हाने लगे तो फिर शायद पुरुष पीछे हो जाएगा। शील और सदाचार की ताबीज पहनने वाली स्त्री पुरुष से भी ज्यादा खौफनाक हो जाएगी।

स्त्रियाँ अश्लीलता का विरोध क्यों कर रही हैं? नामक लेख अश्लीलता एवं प्रेम की धुरी का मूल्यांकन करता है। प्रेम एवं सौन्दर्य के नाम पर समाज में लोग अश्लीलता की हदें पार कर देते है। समाज में स्त्रियाँ प्रेम चित्रण का नही बल्कि स्त्री-पुरुष सम्बधों की उस अश्लीलता का विरोध करती हैं जहाँ प्रेम की मानवीय उदारता के अलावा स्त्री पुरुष के शर्मनाक एवं घृणास्पद रिश्तों का उद्घाटन करना है। आज सौन्दर्य एवं प्रेम अश्लीलता में बदलता जा रहा है। स्त्रियां सामाजिक प्रेम एवं सौहार्द को बनाए रखना चाहती हैं। आज अश्लीलता के नाम पर स्त्रियों को ही बदनाम किया जा रहा है, पर स्त्री को ही केवल कटघरे में खड़ा करना कहाँ तक उचित है? नारी मानवीय मूल्यों को तलाशती है, वह सबको एक कर सहज एवं सादगीपूर्ण जीवन का उदाहरण पेश करती है। भारतीय नारीवाद मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करता है, सबको समान समझता है। इस संम्बन्ध में इंदु भारती का कहना है कि-"भारत में औरतों को स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है बशर्ते स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में आत्मिक, मानसिक विकास में थोड़ी सी गुजांइस पैदा की जा सके। दोनों को एक-दूसरों की जरुरत है इसलिए स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में बदलाव की आवश्यकता है।"[13]

अभिज्ञान के बाद- इस लेख के माध्यम से मृणाल पाण्डे ने संस्कृत नाटक के उस पूर्णतः अनुशासित और एक सर्वस्वीकृत मर्यादा में आबध्द संसार से हमारी सदी के इस उतराई तक आते-आते समूची भारतीय परम्परा की कड़ी जुड़ती दिखाई देती है। यदि हम शाकुन्तल से लेकर अब तक की नाट्य परम्परा का अब लोकन करें तो यह पता चलता है कि स्त्री की स्थिति मे (युध्द एवं प्रेम) दोनो क्षेत्रों में रोचक बदलाव हुए है। अभिज्ञान मे शकुन्तला का प्रेम और दुष्यन्त का शकुन्तला का त्याग दोनो अपने अलग-अलग मायने है। शकुन्तला वस्तुतः दुष्यन्त से श्रेष्ठ है क्योकि उसमे सर्वस्व न्यौछावर करने की क्षमता है तथा उसके विछोह से पशु-पक्षी तथा वनस्पतियाँ भी कन्दन करने लगती है। दुष्यन्त अपनी मनोस्थिति के कारण नाटक का नायक तो है पर शकुन्तला की तरह श्रेष्ठ नहीं। इसी तरह का जिक्र प्रसाद के' ध्रुवस्वामिनी' नाटक में भी मिलता है। ध्रुवस्वामिनी नाटक में ध्रुवस्वामिनी अपने मान, स्वाभिमान की स्वयं रक्षा करती है। इसके लिए वह शकराज की हत्या करने के लिए भी उद्वत हो जाती है। हमारे भारतीय नाटकों में भी स्त्री को सशक्त दिखाया गया है, उसे गौरवान्वित दिखाया गया है। वह अपनी सुरक्षा एवं अस्तित्व की दुनिया स्वयं निर्धारित करती है।

कलाजगत का आतंकवाद और कलाकार स्त्री- कलाजगत में भी स्त्रियाँ आगे हैं। बहुत पहले से स्त्रियां कला के क्षेत्र में पुरुषों से आगे रही हैं। संगीत सिखाना हो, नृत्य तथा गीत गाने आदि की शिक्षा भी स्त्रियां देती रही हैं।

बनारस का घराना हो या अवध का कोई भी क्षेत्र हो स्त्रियाँ कला एवं संगीत के विषय में सबका मार्गदर्शन करती रही हैं। यह बात अलग है कि आज गीत, संगीत, कला का हब अब वालीवुड बम्बई में है, वहाँ एक विशेष वर्ग उस पर अपना अधिपत्य जमाए हुए है। वालीवुड के क्षेत्र में स्त्रियों का योगदान कम नही है, वे गीत, संगीत की कमान अब भी संभाले हुए है। फिल्मों मे काम करने वाली तमाम अभिनेत्रियाँ पुरुष अभिनेताओं की अपेक्षा ज्यादा मेहनत कर रहीं है। कलाजगत में पुरुषों का आतंक अब भी हावी है, वे अब भी स्त्रियों को पीछे देखना चाहते हैं। कलाजगत की विसंगतियों पर इशारा करते हुए मृणाल पाण्डे लिखतीं हैं कि- "सच तो यह है कि जिस तरह हमारे यहाँ लगातार लोकतंत्र की तुरही बजाये जाने के बावजूद राजनीति में सामंती ढ़र्रा ही कमो बेश जारी रहा है, उसी तरह कला-जगत में भी सैकड़ों कमेटियों वाले भारत भवनों और अकादमियों की वातानुकूलित अट्टालिकाएँ बनने के बाद भी हर जगह, हर बार उनके संचालन का पूरा तन्त्र पुरुष सत्तात्मक होता है और एक ही व्यक्ति और उसके कुछेक नक्षत्र-गणों के हाथों में देर-सबेर आ सिमटता है।"[14]

उत्पादकों की उत्पादक स्त्री की मुरझाती दुनिया- में मृणाल पाण्डे ने स्त्रियों के लिगांनुपात एवं अन्र्तराष्ट्रीय स्तरपर उनकी स्थिति को बताया है। आज स्त्रियां हर क्षेत्र में आगे हैं फिर भी उनकी तादात घटी है। जन्म से उन्हे मार दिया जाता है कोई नही चाहता है कि लड़की पैदा हो। इतना सब कुछ होने के बावजूद भी स्त्रियाँ शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीति, सामाजिक हर क्षेत्र

में आगे है। अखबारों में अक्सर स्त्रियों को कन्या पैदा करने पर कोहराम मच जाता है, उसे अच्छा नही समझा जाता। यहाँ तक कि इतना तक सुना जाता है कि अमुक स्त्री ने बार-बार कन्या पैदा होने पर आत्महत्या कर ली। अपने ही देशमें स्त्री का खुद का स्त्री होना बोझ हो गया है और कन्या को जन्म देना पाप समझ लिया गया है। समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस या गोष्ठियों मेंस्त्रीविमर्शपर खूब चर्चे होते है, उनके लिए सम्मान की तालियाँ बजती हैं परन्तु यह सब वही तक सीमित होता है। सरकारें या निजी संगठन महिला सुरक्षा, महिला सुधार के खूब दावे भरते हैं परन्तु यह सब केवल कागजों तक सीमित होता है, वास्तविकतामें कुछ नही होता। हरियाणा जैसे राज्य में महिला लिगांनुपात की कमी यह दर्शाती है कि देश में महिला विकास तथा नारी सम्मान की छवि घट रही है। आए दिन स्त्रियों के साथ छेड़छाड़, बलात्कार, दहेज के खातिर जला देना इन सब में कमी नही आ रही है, कमी आयी है तो केवल तादात में, सम्मान में, विकास में तथा उनके शिक्षा तथा स्वास्थ्य की परवरिश में। नारियों के विषय में सिमोन लिखती हैं कि-"औरत को औरत होना सिखाया जाता है।"[15]

देखो एक आजाद औरत की गुलामी- जब-जब स्त्री मुक्ति आन्दोलन की बात उठती है तब-तब महिलाओं की सुरक्षा एवं अधिकार की बात होती है। अहम सवाल है कि क्या हम इसे गम्भीर चिन्तन या बहस का मुद्दा बनाते रहेगे या इसके लिए कुछ कर पाएगे? स्त्रियों की स्थिति पर जब बात होती

है तब प्रश्नकर्ता खुद ही सवाल में उलझ जाते हैं इतना ही नही प्रश्न करने वाले कभी क्या जानते होगे कि उनके ही घर में स्त्री है उसको बिन मांगे सब अधिकार नही मिलते है। स्त्री और पुरुषों के बीच में जो असमानता का अन्तर है वह अब भी न जाने कितनी विचारधाराओं एवं वर्गों के घेरे में घिरा हुआ है।

मृणाल पाण्डे ने इस लेख में ग्रामीण स्त्री के जीवन की वेदना का जिक्र किया है जहाँ वह अधिकारों से वंचित है। लेखिका बताती है कि हमारे देश में वास्तविक रुप से शोषण का शिकार निरक्षर देहाती स्त्री है जो घर में सामाजिक रुढ़ियो से ग्रस्त है और बाहर में खेतिहर स्त्री त्रस्त है पितृसत्तात्मक कार्यप्रणाली से। जब भी स्त्री मुक्ति की गूंज गूजेगी या क्रान्ति होगी सबसे पहले यही स्त्री विरोध करेगी। एक और बात स्त्रियों के बारे में सुनने को मिल जाती है कि स्त्रियों ने देश की आजादी या स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया था यह बात सत्य है पर सच्चाई यह हैकि आजादी की लड़ाई में वही औरते शामिल हुई जो मध्यमवर्गीय शिक्षित शहरी घरानों से जुड़ी थी या अपने पिता, पति, ससुर, पुत्र का जिनको प्रोत्साहन मिला था, वे अपने स्वयं के निर्णय से नही जुड़ी। आज महिलाएँ कम पैसे में नौकरी करने को बाध्य है। न जाने कितनी कलाकार, पत्रकार, वैज्ञानिक, डाक्टर या अफसर स्त्रियां विद्वान होते हुए भी कम पैसे में अधिक कार्य कर रही हैं और इसका कोई कानूनी आधार या तर्क भी नही हैं। नारी विमर्श की इस अवधारणा पर यह कहा जा सकता है कि- "स्त्री विमर्श पुरुषों के

विरन्द्व अभिमान नही है न ही उसमे प्रतिस्पर्द्वा करने की चेष्टा है। स्त्री-विमर्श स्त्री को स्त्री रुप में ही बनाए रखने की विधारणा है।"[16]

बहू नही, धन-

लेखिका ने सर्वे के आधार पर यह दिखाने का प्रयास किया है कि आज जब शादी-विवाह होते है तो बहू को लोग बाद में देखते है बल्कि पहले पैसे (धन) दहेज की बात करते है। कितना मिलेगा, क्या-क्या मिलेगा, नही हमको 10 लाख चाहिए, नही इतने से कैसे होगा? तमाम बातें सामने आती आती हैं। ऐसा लगता है कि जैसे आज बहू (स्त्री) का कोई मूल्य ही न रह गया हो। लेखिका मृणाल पाण्डे ने धन लोभी ससुराल पक्ष के बारे में ऐसा माना कि शादी के बाद जब उपभोग्य वस्तु यानी बहू वर पक्ष वालो के हाथ लग जाती है तो वे उसका प्रयोग उस बंधुआ मजदूर की तरह करने लगते है जिसे सताने की धमकी देकर उनके अभिभावकों से मोटी रकम माँगी जाती है और तब शुरु होता है स्त्रियों पर अत्याचार, मारपीट, गाली-गलौज, फिरौती। ऐसी स्थिति में तब वह युवती बछड़े की तरह अपने माँ के पास भागती है। अभिभावकों के जाने पर मुँह मांगा दाम बोलते है, पैसे के बल पर ही समझौता होता है। आज देश में बहुओं की स्थिति यहीं हो गयी है। धन के लोभ के आगे बहू कुछ नही, लगता है बल्कि उसे मार्केट में बिकने वाला जिंस समझ लिया गया है।

स्त्रीषु हिंसा, हिंसा न भवति- नामक लेख में लेखिका ने स्त्री हिंसा का विरोध किया है तथा पति-पत्नी के सम्बन्धों की चर्चा की है। लेखिका ने सर्वे में अहमदनगर की बीड़ी कामगार यूनियन ने स्त्री कामगारों की चर्चा की है। सरकारें कानून बना रही हैं कि हिंसा, बलात्कार तथा स्त्री शोषण रुकना चाहिए फिर भी आए दिन अखबारों और टी.वी. चैनलों पर यह खबर धड़ल्ले से दिखाई जाती है। संसद और विधान सभाओं में यह मुद्दे आम हो गए है। आए दिन जब पति-पत्नी या पिता-बेटी के मार-पीट का मामला पुलिस स्टेशन में आता है तो पुलिस अक्सर यह कहकर भगा देती है कि ये तो मियाँ-बीबी या पिता-बेटी का मामला है। उसने पीटा है तो अपनी पत्नी या बेटी को ही पीटा है किसी गैर को तो नही मारा? समाज में ऐसे ही स्त्रियां हिंसा का शिकार हो रही हैं। पुलिस या प्रशासन तथा समाज हिंसक हो गया है,वह इसे हिंसा नही मानता। पितृसत्तात्मक समाज पशुओं की तरह स्त्रियों पर भी हिंसा करता है। हिंसा का शिकार स्त्री के बारे में अक्सर यह कहा जाता है कि यह उसके नियति में है। उसे वह स्वीकार करे जबकि उसके प्रति सहानुभूति नही अपनायी जाती है। अब सवाल यह उठता है कि आए दिन स्त्रियों के साथ छेड़-छाड़, मार-पीट, दहेज के लिए जला देना, छोटी-छोटी बातों पर प्रताड़ित करना, दहेज के लिए घर से बाहर भगाना-क्या ये सब हिंसा की श्रेणी में नही आता?

किसे परवाह है बच्चों की- नामक लेख बच्चों की जिन्दगी का रिर्पोट परक खाका प्रस्तुत करता है। आज देश में छोटे-छोटे बच्चे शोषण का शिकार हो रहे हैं, खासकर वे बच्चे अधिक हो रहे हैं जिनके माता-पिता नही है। लेखिका ने शोधपरक आकड़े में यह दिखाया है कि- "भारतीय समाजशास्त्र अनुसंधान परिषद की बम्बई-शाखा के शोध के अनुसार 88 प्रतिशत बाल मजदूर गरीबी से, 3- प्रतिशत माता-पिता की उदासीनता की वजह से, 5-प्रतिशत माता-पिता की अकाल मृत्यु की वजह से तथा 4 प्रतिशत माता-पिता की वहज से काम पर जाने को बाध्य होते है।"[17]

भोजन की राजनीति- नामक लेख में स्त्रियों के खान-पान को लेकर चर्चा की गयी है। स्त्रियां यदि अपने खान-पान स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य के प्रति तनिक सचेत होकर रहने लगे तो समाज या लोग उन्हे धनलोलुप, स्वार्थी या फैशन परस्त करार देने लगते है। इतना ही नही स्त्रियों के खान-पान, सजने-धजने तथा घूमने टहलने पर पाबंदिया लगायी जाती हैं। घर, परिवार और स्त्री में मृणाल पाण्डे ने घर की स्थिति, परिवार में स्त्री का महत्व तथा स्त्री की मनः स्थिति का हवाला दिया है। अपने ही परिवार में स्त्री पिता, पुत्र पति तथा सास की मानसिकता को झेलती है। वह सब को साथ लेकर चलती है जैसा कि उसे बचपन से पढ़ाया जाता है। लेखिका ने स्त्री को केवल सामान्य स्त्री नही बताया घर परिवार में रहते हुए वह कामकाजी स्त्री है। घर में स्त्री डरकर रहती है, अपने अधिकार का सम्पूर्ण प्रयोग नही कर सकती। उसे दबाया जाता है, यहाँ तक कहा जाता है कि यह तुम्हारे

लिए नही बना है। मृणाल पाण्डे ने घर-परिवार की स्त्री का कारुणिक चित्रण किया जो इस प्रकार है- "आज हम यह नही जानती की प्यार करना होता है। हम सिर्फ डरना जानती हैं और यह डर एक छुतहा बीमारी है। अत्याचार का असहाय शिकार बनने के लिए औरतों में कहीं एक हवस सी बन गयी है जो उतनी ही गहरी है जितनी की पुरुषों की ताकत की हवस। इन दोनो लतों को छोड़ना उतना ही तकलीफ देह होता है, जितना मादक द्रव्यों के नशे की लत को छोड़ना। पर जब हम अपनी आत्मा की पूरी ताकत लगाकर यह समझ पाते है तो अचानक हमें दुखों के बीच एक राह नजर आने लगती है।"[18]

श्रम जीवी स्त्री-कुछ सच्चाइयाँ- नामक लेख में लेखिका ने स्त्रियों के श्रम पर चर्चा की है। स्त्रियां दुनियां में सबसे अधिक काम करती हैं, सबसे अधिक मेहनत करती हैं फिर भी पुरुषों की अपेक्षा उन्हे कम पारिश्रमिक मिलता है। कई राज्यों की स्त्रियों के श्रम का जायजा लेते हुए लेखिका ने रिपोर्ट भी प्रस्तुत किया है। केरल में झींगा मछली छीलने वाली स्त्रियों को जब 500 रु0 माह वेतन मिलता है तो वे औरतें इतना कम वेतन् लेने से इनकार कर देती हैं जबकि पुरुषों का वेतन उनसे ज्यादा था फलस्वरुप उनका वेतन बढ़ाया गया।

प्रगति के साथ महिला कामगारों की छँटनीभी- नामक निबन्ध स्त्री जीवन की विसंगति को दर्शाती है कि वे काम भी करती हैं, साथ ही साथ उनमें दोष निकाल कर उन्हें काम से बाहर भी निकाला जाता है। स्त्रियों की भारी

छटनी से धीरे-धीरे दिहाड़ी मजदूर या खेतिहर मजदूरों की संख्या बढ़ी है। जहाँ स्त्री को गृहस्वामिनी कहा जाता है तथा धन का समाहर्ता माना जाता है वहीं दूसरी ओर कच्ची उम्र में एक लड़की की आकांक्षाओं या ईच्छा को दबाया जाता है।

वेश्यावृत्ति और कानूनी मान्यता का सवाल- नामक निबन्ध में वेश्यावृत्ति, देह-व्यापार आदि की स्थिति का जायजा लेखिका ने लिया है। वेश्यावृत्ति एक ऐसा अपराध है जिसमे दोषी सिर्फ स्त्री मानी जाती है पुरुष नही, जबकि पुरुष ही उसकी देह खरीदता है, उसका शोषण करता है। 1956ई0 के वेश्यावृत्ति निरोधक कानून मेंकुछ कमी रह गयी थी। यह कानून वेश्यावृत्ति को मिटाने का प्रयास नही करता बल्कि चकला घर जलाने, उसके लिए किराए पर घर देने अथवा वेश्या, की दलाली करने को जुर्म मानता है। यह कानून आज तक पाबंदी नही लगा पाया बल्कि इसके नाम पर कुछ अलग ही राजनीति होती है। एक सर्वे व आकड़े के अनुसार यह पता चलता है कि देश में सबसे अधिक वेश्यालयों की संख्या मुम्बई में है। मुम्बई पुलिस के रिकार्ड यह बताते हैं कि 1981-1985 के बीच कुल लगभग 400 वेश्यालयों पर छापे पड़े। आज भी वेश्यालयों की संख्या बढ़ रही है, स्त्रियो की स्थिति दयनीय होती जा रही है लेकिन सरकारी शासन व्यवस्था कम आकड़े प्रस्तुत करती है तथा स्त्रियों की स्थिति को खुशहाल दिखाया जाता है।, वेश्यावृत्ति तथा स्त्री के अस्तित्व की गरिमा का ख्याल रखते हुए मनीषा ठक्कर कहती हैं कि- "आज की स्त्री को 'इदन्नम की मंदाकिनी

और आंवा की नमिता की भाँति पवित्रता के ख्यालों से मुक्त होना ही होगा। बलात्कार होने पर कोई बालिका या स्त्री अपवित्र, जूठी, त्याज्य कैसे हो जाती है?"[19]

समालोचक मिल तो लें उनसे जो पापड़ बेलती हैं- यह निबन्ध कामकाजी स्त्रियों के बारे में है जो पापड़ बनाती है, गृहस्थी का कार्य करती हैं। पापड़ बेलने के कार्य में कामकाजी स्त्रियाँ घर के छोटे-छोटे बच्चों को भी लगा देती हैं। कार्य अधिक करना पड़ता है जबकि मेहनताना कम मिलता है। दूसरी दिक्कत है कि इन स्त्रियों को कोई सशक्त श्रमिक मजदूरों का सहारा न मिलना। देश में कई मजदूरों के संगठन है जिनसे उनकी बातें ऊपर तक जाती हैं पर इन स्त्रियों की बातें कौन सुने? साहित्य की आलोचना करने वाले समालोचकों की निगाह भी यहाँ तक नही पहुँचती, वे भी चुप्पी साध लेते हैं।

इसी तरह का निबन्ध **अ से अन्नपूर्णा अ से अहिंसा** है। स्त्रियाँ अन्नपूर्णा कही जाती हैं, घर की सफाई से लेकर खाना बनाने की जिम्मेवारी स्त्रियों पर होती है। स्त्रियां दिन भर कार्य करती हैं परन्तु घर के काम को कार्य नही समझा जाता और न ही इस कार्य के बदले उन्हे कोई पारिश्रमिक मिलता है। ऊपर से उन पर हिंसा भी होती है। मृणाल पाण्डे इस सन्दर्भ में कहती हैं कि- "कहानी-कविता या कभी-कभी भावुकता में पगे निबन्धों में हम स्त्री की अन्नपूर्णा मूर्ति के गुण भले ही गाते रहे हों, इस कुटीर उद्योग

की मार्फत पूरे परिवार तथा खुद अपना जीवन यापन करने वाली मेहनती कामगार बहनें अभी भी औद्योगिक जगत की परियोजनाओं, सुविधाओं और ठोस आर्थिक लाभों से दूर हैं।"[20]

पशुपालन उद्योग की अदृश्य धुरी: स्त्री- नामक निबन्ध में पशुपालन, दूध के उत्पादन के बारे जानकारी मिलती है। देश में जितना दूध का उत्पादन होता है उसमे स्त्रियों की भागीदारी कितना है? गुजरात, आन्ध्र प्रदेश आदि राज्यों की स्त्रियों के दुग्ध व्यवसाय तथा उनके योगदान को दिखाया गया है। कृषि कमीशन की 1971 ई. की रिपोर्ट बताती है कि गरीब तथा भूमिहीन ग्रामीणों की आमदनी बढ़ाने का और उनके आर्थिक विकास का सबसे अच्छा जरिया दुग्ध पालन है। पशुपालन में जो भी फायदा होता है वह सीधे औरतों तक नही पहुंचता बल्कि सबसे अधिक मेहनत वहीं करती हैं। दुग्ध व्यवसाय में स्त्रियों की भागीदारी के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आज के समय में भारतीय स्त्रियों की दुर्दशा की पड़ताल एवं मानवीय जीवन की विसंगतियों का यह खाका खेदपूर्ण है। स्त्रियों को जहाँ खाने तक की एक जून की रोटी नही वहीं उनके विकास की बातें की जाती है- यह सबसे बड़ा सवाल है? इक्कीसवीं सदी की खेतिहर स्त्री-नाम निबंध में कृषक जीवन की कठिनाइयों का अंकन है, साथ ही महिलाओं का कृषि के क्षेत्र में कितना प्रतिशत योगदान है इसको भी दर्शाया गया है। देश में इतनी आबादी बढ़ रही है और भूमिहीन खेतिहर मजदूरों की संख्या बढ़ रही है उसमे भी स्त्रियों की संख्या ज्यादा है। स्त्रियांघर के साथ खेत के काम में हाथ बटाती हैं।

दोहरे कार्य करते हुए समाज को संगठित करती हैं फिर भी उनके मूल्य को कम आंका जाता है।.

जनानियां हल नई ना लगाणी- नामक निबंध महिलाओं के भागीदारी में कमी को दर्शाती है। साथ में यह पता चलता है कि स्त्रियां समाज में किस प्रकार उपेक्षित है? हिमांचल प्रदेश की रिपोर्ट में स्त्री जीवन की जो गाथा पेश की गई वह समाज में स्त्रियों के संवेदना की तस्वीर खोलती है। "उदाहरण के लिए हिमांचल के सीलन जिले में स्थित कारखाने की शराब भारत भर के पियक्कड़ो में खूब जानी जाती है और इससे सरकार को आमदनीभी होती है लेकिन वहाँ की स्त्रियों को कोई फायदा नही बल्कि नुकसान होता।"[21]

मेहनत का काम औरतों के हिस्से में, नाम और पैसे का काम मर्द के हिस्से में, क्या यही समाज की तस्वीर है? अपने आपको दीन कहने वाली स्त्रियाँ समाज से कितना सघर्ष करें? सरकारी योजनाएँ तो है पर स्त्रियों के लिए नही है जिससे वे अपनी जिंदगी जी सकें। छोटे-छोटे पेशों मेंजैसे सिलाई, कढ़ाई, बुनाई से स्त्रियां कितना गुजारा करें। इतने पर भी उनको इस क्षेत्र में पूरी छूट नही है, जीवन जीना तो दूर दो वक्त की रोटी का प्रबन्ध करना भी दुस्वार हो गया है। लेखिका ने इस रोचक एवं तथ्यपरक निबंध के माध्यम से आज के भारतीय समाज की सच्चाई को दिखाया है कि शिक्षा, भोजन, व्यवसाय, मकान नही मिलता पर समाज को बर्बाद करने के लिए शराब का ठेका आसानी से मिल जाता है जिसका कुप्रभाव

समाज के लोगों पर पड़ता है। अनपढ़ युवक शराब के नशे से चूर कोई कार्य करते नही ऊपर से स्त्रियों को ही मारते-पीटते है। स्त्री की यह करुण कथा मानव हृदय को झकझोर देती है। जीने के लिए दवा नही मिलती लेकिन शराब की बोतल बड़ी आसानी से मिल जाती है।

स्त्री शिक्षा की अँधेरी भूल भूलैया- नामक निबंध स्त्री शिक्षा की पोल खोलता है। स्त्रियों की शिक्षा पर सरकारें पैसे भी खर्च करतीहैं, योजनाएँ चलाती हैं, और अच्छी खासी रिपोर्ट भी आ जाती है कि महिला शिक्षण में सुधार भी हो रहाहै लेकिन कितना होता है? यह किसी से छुपा नही है। आने वाले समय में महिला शिक्षा मेंजो सुधार हो रहा हैवह अब भीकम है। शहरों में तो ठीक है लेकिन गांवों मेंअब भी महिला शिक्षा की तादात कम है। आने वाली तकनीकि शिक्षासे स्त्रियों में कुछ सुधार हो सकता है। यदि उनकों मशीन के काम, तथा कारीगरी के काम में सफलता मिले तो वे आगे जा सकती हैं।

बच्चे वाली माँओं के बाहरी कामकाज का मोल- नामक निबंध उन माताओं का खाका प्रस्तुत करता है। "जो मांए कामकाज के साथ बच्चे भी संभालती है। मृणाल पाण्डे के अनुसार-बच्चा पालना अपने हथेली पर मारने से ज्यादा दुष्कर है।"[22]

बाहर काम करने वाली मजदूरिने काम भी करती हैं साथ ही, बच्चों को भी संभालती रहती हैं। उतने पर भी मालिक देख लिया तो दो शब्द सुनाता रहता है।

स्त्री खबरों में नही, उनके बीचों बीच है- यह निबंध स्त्री की सहभागिता एवं उसके स्त्रीत्व की पहचान कराता है। पत्रकारिता जगत में स्त्रियों के साथ भेद-भाव को भी लेखिका ने इस निबंध में दिखाया है। देश में लगभग ¾ स्त्रियाँ बाहरी कामकाज करती है लेकिन किसी संघ या रिपोर्ट ने यह नही दिखाया कि उसमे उनकी कितनी हिस्सेदारी है। स्त्रियों के बारे में अश्लीलता पेश करने वालों के लिए अबतक कोई कानून भी नही बना है बल्कि बदनाम करने का ठेका ले लिया है। आने वाले समय में स्त्रियों की हर क्षेत्र मेंभागीदारी उन्हे आगे ले जा सकती है। स्त्री के अस्तित्व के बारे में तस्लीमा नसरीन कहती हैंकि- "जिस दिन यह समाज स्त्री-शरीर का नही शरीर के अंग-प्रत्यंग का नही, स्त्री की मेधा और श्रम का मूल्य सीख जाएगा सिर्फ उस दिन स्त्री मनुष्य के रुप में स्वीकृत होगी।"[23]

(3) जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं-

मृणाल पाण्डे ने इस पुस्तक में अपने समय में लिखी गयी टिप्पड़ियों एवं आलेखों का नारी विषयक विवरण प्रस्तुत किया है। लेखिका ने राजनीति में महिला सशक्तिकरण एवं पंचायती व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी के साथ-साथ अन्य छोटे-छोटे सवालों का जिक्र किया है। जब महिला विषयक विवरण शुरु होते है तो लगता है कि कोई क्रान्तिकारी फिल्म चल

रही है जिसमे पितृसत्तात्मक व्यवस्थामें फसी स्त्री छटपटा रही है। उसमे केवल स्त्री की छटपटाहट नहीं है बल्कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' की छटपटाहट कहने वाले लोगो से तीखा सवाल है। मृणाल पाण्डे पत्रकार भी है इसलिए हर सवाल को सर्वे व रिपोर्ट के आधार पर रखती हैं। चूकि मृणाल पाण्डे का नारी-विमर्श पढ़ा-पढ़ाया (किताबी) नारी विमर्श नही है बल्कि शोधपरक एवं रिपोर्टपरक नारी-विमर्श है।

यह लेख फारसी नाटक खेलने वालों कलाकारों एवं जीवन शैली का चित्रण प्रस्तुत करता है। नाटक खेलने वाले कलाकार महिलाओं का किरदार अदा करते थे यहाँ तक की वे महिलाओं जैसा आचरण भी करते थे। 1920 दशक में मास्टर चम्पालाल जैसे लोग महिला कलाकार की भूमिका अदा कर रहे थे। पहले के जमाने में औरतों को बाहर निकलने की मनाही थी लेकिन अब समाज बदल रहा है। आधुनिकता के दौर में स्त्रियाँ स्वयं आगे बढ़ने का साहस कर रही हैं। वे कला, राजनीति, धर्म, शिक्षा के क्षेत्र में आगे निकल पड़ी है। मृणाल पाण्डे ने गौहर जान, शान्ताबाई जैसी फिल्मी दुनियां में सफल स्त्री का जिक्र किया है। ये सभी अपने मेहनत एवं कलाकारिता के बल पर नाम कर गयी।

नीचे से ऊपर, ऊपर से नीचे- नामक निबंध में मृणाल पाण्डे ने मेरठ, हरिद्वार तथा गौरीकुंड नामक स्थान की यात्राओं का वर्णन किया है। देवप्रयाग के बगले में टूरिस्ट का जिक्र सुखद अनुभूति का एहसास कराता है। वहाँ की दुकानों, खान-पान, रहन-सहन का सारगर्भित चित्रण किया गया

है। वहाँ के स्थानीय बाजार एवं कला संस्कृति का चित्रण तो लेख में रोमांच पैदा करता है। माँ और मैं नामक शीर्षक में लेखिका ने अपनी माँ के साथ यात्रा का जिक्र किया है। जिसमे माँ और बेटी दोनो एक साथ घूमने जाती है। इस लेख में उन्होने अपनी माँ का परिचय भी बताया है। कि मेरी माँ शिवानी है जो 1960 के दशक की अच्छी लेखिका थी।

अन्दर के पानियों का सपना- नामक शीर्षक में नारीवाद को लेकर विस्तृत चर्चा है। आज की दृष्टि से नारीवाद का सटीक मूल्यांकन मृणाल पाण्डे की एक खास विशेषता है। आज स्त्रियां लिख भी रही है और देख भी रही हैं। महिला लेखन में नारियों की भूमिका अहम है। पिछले 50 सालों में आन्तरिक और बाहरी दुनियाँ में स्त्रियों के जबरदस्त आन्दोलन हुए है। अल्का सरावगी, तेजी ग्रोवर, गगन गिल, कात्यायनी तथा गीतांजलि जैसी लेखिकाएँ नारीवाद को मुख्य धारा से जोड़ रही हैं। नारीवाद को लेकर मृणाल पाण्डे लिखती है कि- "ज्यादातर समीक्षकों में नारीवाद की जो एक ठलुआ रसहीन, संकीर्ण और अधकचरी समझ व्याप्त है, वह पूर्ववर्ती श्रृंगारिक रुझान के सिक्के का ही दूसरा पहलू है।"[24]

माँ से प्रभावित होता है स्त्री का व्यक्तित्व- नामक शीर्षक में लेखिका ने अपने माँ से प्रभावित विचारों को व्यक्त किया है। उनकी माँ बताती थी कि कोई स्त्री जन्मना सुमाता नही होती माँ बनने के बाद ही उसे मातृत्तव की पहचान होती है। माँ हमेशा अपने बच्चों को उचित सीख देती है। अच्छी लड़की बनने के लिए क्या खाएँ, क्या पहने, खेलें या पढ़े नही, हम क्या

बोले, क्या सोचे, क्या हसें, क्या सपने देखें यानी बेटियों पर हमेशा माओं की नजर रहती है। माएं स्त्रीत्व का मानचित्र बेटियों पर डालने की कोशिश करती हैं।

महिला पत्रकारों की स्थिति ने पत्रकारिता जगत के अनुभवों को व्यक्त किया है। मीडिया के क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएँ अग्रेजी को छोड़कर हर भाषा में काम करने वाली महिला पत्रकार को पत्रकारिता में आने का मतलब रोज कुँआ खोदना और पानी पीना है।

नारीवादी आन्दोलन की विडम्बना में युवतियों एवं किशोरियों के जीवन में उदारवादिता के प्रवेश, समाज में स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों को लेकर चर्चा की गई है। '**वालीवुड में मौत**' में स्त्रियों की दयनीय स्थिति का जिक्र किया गया है। फिल्मों में अभिनेत्रियों की स्थिति तथा उनके शोषण की विस्तार से चर्चा है। '**सती लोकतन्त्र और हम**' नामक लेख में सतियों की कहानी की चर्चा है कि हमारी सती स्त्रियाँ पवित्रता एवं सम्मान की मिशाल पेश कर गयी है। भारतीय राज-समाज के अर्द्धसत्यमें मानव अधिकारों के हकदार स्त्रियों की बखूबी चर्चा है। भारतीय राजनीति में महिला आरक्षण का सवाल शीर्षक में स्त्रियों के आरक्षण की चर्चा है। इतना सब कुछ होने के बावजूद आज हिन्दुस्तान में महिला आरक्षण केवल कागजों पर लागू होते हैं, वास्तविक रुप से नही।

हमन को होशियारी क्या- नामक शीर्षक में नारी जीवन की अवधारणा एवं व्यवहारों का विवरण है। कबीर की उक्तियों के माध्यम से नारीवाद की चर्चा है। पंचायती राज में महिला भागीदारी का एक दशक-में देश की आजादी के बाद स्त्रियों की स्थिति तथा सुधार की वास्तविकता को दिखाया गया है। फील गुड वर्ष और सन्त वेलेटांइनडे तथा स्त्री होने का सच में पश्चिम के नारीवाद से लेकर भारतीय धर्मग्रंथों में स्त्री-विमर्श की मुख्य अवधारणा को रेंखाकित किया गया है। **अकाल मृत्यु और स्कूल के बीच ठिठकी लड़कियाँ तथा राजनीति में महिला सशक्तिकरण-ना**मक लेख महिला विकास एवं नारीवाद की समस्त संवेदना को दर्शाता है। **चौथी कसम उर्फ पकड़ी गयी मिस इण्डिया तथा मातृदिवस के बहाने मूर्तिभंजक विचार**-नारी अस्मिता के पहलुओं को उदघाटित करता है। **समर्थ स्त्रियों से कौन डरता है?** में नारीवाद की स्पष्ट व्याख्या मिलती है। **स्वतंत्रता क्या है**-में स्त्री स्वतन्त्रता की बात की गई है। **आओ गुड़िया से खेले**- में कई साहित्यकारों के माध्यम से साहित्य में नारियों के अवदान को मूल्यों के साथ जोड़कर दिखाया गया है।

'परिधि का प्रतिशोध'- नामक लेख नारी गरिमा को एक व्यक्तित्व के रुप में दर्शाता है। **देखो-देखो उनकी उच्चशिक्षा का उजाड़**- स्त्रियों की बेरोजगारी एवं शिक्षा पर व्यंग्य किया गया है। **एम.एस सुब्बुलक्ष्मी** शीर्षकके माध्यम से सुब्बुलक्ष्मी के जीवनकाल के 88 वर्ष की च है। सुब्बुलक्ष्मी ने जीवन में संघर्ष

करके यह दिखाया है कि भारतीय नारी को जीवन के हर मोड़ से नही घबराना चाहिए। सुब्बुलक्ष्मी ने संगीत की दुनियां में नाम कमाया फिर स्त्रियों के लिए एक मिसाल बन गयी। आज ऐसे ही स्त्रियों की हिन्दुस्तान में जरुरत है।

(4) ओ उब्बीरी-

कुल 9 अध्यायों में विभक्त इस पुस्तक में मृणाल पाण्डे के एक से बढ़कर एक लेख है। ये लेख नारीवाद की बनावटी अवधारणा का खण्डन करते हैं। तर्क एवं प्रमाण के आधार पर प्रतिष्ठित मृणाल पाण्डे का नारी विमर्श नारी-पुरुष के पुराने मुद्दों की खाई को पाटता है। इनके यहां नारी को दोयम दर्जे से निकालकर स्वच्छ मानवीय धरातल पर उच्च स्थान प्रदान करने की कोशिश की गयी है। '**एक सोते शहर में निद्राहीन**' नामक लेख में लेखिका ने अपनी विहंगम दृष्टि से समस्याओं में उलझी स्त्रियों की गाथा का विस्तृत वृतांत प्रस्तुत किया है। लेखिका ने इस पुस्तक में अपने भ्रमण के दौरान देखी गयी घटनाओं का आँखो देखा वर्णन किया है। उन्हें जब भी मौका मिला दूर ग्रामीण इलाकों और शहरों की बस्तियों में जाकर सम्पर्क किया और कई सरकारी संगठनों, स्थानीय निकायों तथा स्वैच्छिक जनसेवियों की रिपोर्ट को अपने साहित्य में अभिव्यक्त किया है। मृणाल पाण्डे कहती हैं कि- "मैने देखा कि समग्र दृष्टि के अभाव में किस तरह औरतों के सशक्तिकरण के लिए उठाए गए नेकनीयत सरकारी कदम भी कई बार आम स्त्री के मानवाधिकारों को कुचल सकते हैं कि अगर कोई

गरीब स्त्री अनपढ़ हो, पिछड़े इलाके के गाँव या बड़े शहरों की किसी मलिन बस्ती में रहती हों और अंग्रेजी भाषा बोलने समझने में महरुम हो, तो राजसत्ता और उसके संवाहकों की नजर में वह एक दोयम दर्जे का जीव बनी रहती है।"[25]

आज स्त्रियों को गावों में उचित स्वास्थ्य चिकित्सा की सुविधा मुहैया नही हो पाती। न डाक्टर है, न अस्पताल। आए दिन हजारों स्त्रियां डॉक्टरों की कमी से तथा उचित इलाज नही होने के कारण गर्भपात तथा कई बीमारियों के कारण मर जाती हैं।

हास्य और रूदन के बीच- नामक शीर्षक में लेखिका ने ग्रामीण बंगाल की स्त्रियों का जिक्र किया है। उनके रुदन, उनकी समस्याओं आदि को केन्द्र में रखा है। बंगाल की स्त्रियों एवं बच्चों की स्वास्थ्य रक्षा में जुटी स्वयंसेवी संस्था 'सीनी' का विवरण मिलता है। पोइला गाँव के स्त्रियों की जिन्दगी की जीवन गाथा, उमस से बिलबिलाते हुए लोग अपने परिवार के लिए दवा-दारु से निजात पाने के लिए इन्तजार मे बैठे है। लेखिका को बताया गया कि 'सिनी' संस्था स्थानीय बुनकरों के मोटे परन्तु बुनाई के लिहाज से सस्ते कपड़ो के विपणन की व्यवस्था करती है। पोइला गाँव में दवाइयों के डब्बों के पास रंगीन साड़ी, गमछे तथा थैलों का ढ़ेर मिल जाएगा क्योकि यह सब उस संस्था के लोगो ने लोगो के लिए तैयार किया है। इस भ्रमण के दौरान लेखिका ने मंजू पांजा तथा प्रभावती नामक स्त्रियों का जिक्र किया है। प्रभावती बताती है कि महिलाएं अपने जीवन में परिवर्तन

चाहती हैं लेकिन प्रशिक्षित होने के बाद वे अपना निजी धन्धा शुरु कर देती हैं। महिलाओं को सरकारी ऋण सामूहिक व्यवसाय के लिए नही मिलते यह मुख्य समस्या है। व्यवसाय से लेकर हर कार्य में सबसे अधिक समस्या स्त्रियो के पास है, पुरुषों के पास कम है। इस संम्बन्ध में महात्मा फुले ने कहा है कि- "स्त्री पुरुष जन्मतः, स्वतंत्र है। अतः दोनो को भी निसर्गत, समान अधिकार उपभोगने की सुविधा होनी चाहिए।"[26]

ईश्वर की ड्योढ़ी पर आह्लाद- नामक शीर्षक में स्त्रियों की व्यथा-कथा को लेखिका ने बड़े मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है-

जानी कहे सुन मोरें स्वामी
तेरी ड्योढ़ी छूने को,
बनी मै कुलटा------।(मराठी कवि जनाबाई 14वीं सदी)

इसमे लेखिका ने पुणे (महाराष्ट) की स्त्रियों का जीवन चरित्र बताया है। वे बताती हैं कि इस इलाके में ज्यादातर निरक्षर स्त्रियाँ है। उनकों एच.आई.वी/एड्स के बारे में कोई जानकारी नही है। यदि पुरुष को यह रोग हुआ तो स्त्री उसके लिए अपना गहना बेच देती है, सेवा करती है। यदि बच्चे भी पैदा हुए तो एच.आई.वी. ग्रस्त हुए इसमे सबसे अधिक समस्या स्त्रियों को है। ऐसी स्थिति में यदि पति-पत्नी परिवार के साथ हो तो उन्हे घर से बाहर निकाल दिया जाता है। परिवार मानता है कि सभी संक्रमित है। यहाँ तक कि मरीज के मर जाने पर उनकी झोपड़ी जला दी जाती है और उनकी सम्पत्ति हड़प ली जाती है, ऐसी दशा में पत्नी को कोठे पर

जाने के अलावा दूसरा उपाय कुछ नही सूझता। एड्स ग्रस्त वैश्या बनकर वह संक्रमण को आगे फैलाती है। स्त्री के जीवन की इस दुर्दशा को लेखिका ने अशिक्षा को माना है। सरकार तथा संगठनों को इसके लिए प्रयास करना चाहिए। देश में स्त्रियों के दुर्दशा के ये आंकड़े दर्शाते हैं कि नारियां कितनी समस्याओं से घिरी है?

जब खुलते है बन्ध मन के- शीर्षक में ऐसी कुछ बातों को बताया गया है जिसको स्त्रियां जाहिर नही कर पाती हैं। वे डाक्टरों या दूसरों से भी खुलकर अपनी समस्याएं नही बता पाती। उनके शरीर में यदि आन्तरिक कोई समस्या है तो वे नही बता सकती जिसके कारण वे कई बार इसका शिकार हो जाती हैं। लक्ष्मी ताई जैसी स्त्रियां कम पढ़ी-लिखी जरुर है लेकिन फिर भी प्रशिक्षण लेकर लोगों की सेवा करती हैं। मालशिरा गाँव की मनीषा के अनुभवों को भी लेखिका ने इसमे व्यक्त किया है। मनीषा बताती है कि आने वाली तमाम स्त्रियां बाल-बच्चों वाली होती थी लेकिन उन्हे अपने गुप्त अंगो के बारे में नही पता है। वे मानती है कि शरीर खोखला होता है जिसके अन्दर बच्चेदानी आदि अंग तो है लेकिन उनके बारे मेंबात करने में शर्म आती है। मनीषा ने यह भी बताया कि योनि-श्राव के अतिरिक्त इस क्षेत्र में महिलाओं को गर्भाशय खिसकने की समस्या है। लक्ष्मीताई ने भी बताया कि ऐसी कई महिलाएं है जो खुद अपनी समस्याएं नही बताती। एक महिला ऐसी थी जिसे गर्भाशय की समस्या 15-20 वर्षो से थी लेकिन उसने इस समस्या को बताने मेंकई वर्ष लगाए। आज भी स्त्रियों को ऐसी बहुत सी

समस्याएं हैं जिसे वे खुलकर नही बताना चाहती, कहे भी तो किससे कहे? कौन सुनने वाला है? खासकर ग्रामीण निरक्षर स्त्रियां जिनको कुछ बीमारियों की जानकारी भी नही है, दूसरी बात आर्थिक समस्या है। इलाज की व्यवस्था भी नजदीक मेंनही है। कई कोस दूर जाना पड़ता है। स्त्री जीवन की विसंगति एवं दयनीय स्थिति का मूल्यांकन करते हुए न्यायमूर्ति मिश्र जी ने कहा है कि- "महिलाओं में चेतना जाग्रत होगी तभी अपना' स्व' पा सकेगीं और साधिकार समाज में सम्मानित जीवन जी सकेगी।"[27]

मांगने और पाने का वह अन्तराल- नामक लेख स्त्रियों की दैनिक समस्या एवं जीवन की तमाम समस्याओं से जुड़ा है। रनबाई नामक औरत के माध्यम से लेखिका ने स्त्री जीवन की विसंगतियों का ग्राफ तैयार किया है। स्त्रियां कठोर श्रम भी करती हैं चूंकि उनका घर गांव से जुड़ा है इसलिए बाहर खटने वाले पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को नियमित वेतन नही मिलता तथा पेंशन, स्वास्थ्य सुविधा, प्रसूति लाभ भत्ता सबसे वंचित कर दिया जाता है।

देखो-देखो इन कोखों का उजाड़- नामक शीर्षक तमिलनाडु राज्य की स्त्रियों का सर्वे है। जहाँ भुखमरी, स्वास्थ्य, तथा रोजगार की भी समस्याएं है। राष्ट्रीय मानकों मेंभले ही दर्ज हो कि तमिलनाडु एक प्रगतिशील राज्य है। साक्षरता तथा स्त्रियों की भागीदारी में भले ही यह देश का चौथा राज्य हो परन्तु महिला विकास की नींव पहले से डगमग है। लेखिका ने सुन्दरी रविन्द्रन नामक स्त्री के माध्यम से यह बताया है कि स्त्रियां जाति व्यवस्था

का भी शिकार है। जाति-प्रथा ने स्त्रियों के विकास को कितना पीछे कर दिया? सुन्दरी रविन्द्रन सवर्ण जाति की स्त्री जरुर थी लेकिन उनको गरीबों, दलितों एवं निरक्षर स्त्रियों के प्रति सेवाभाव का जूनून था यही कारण है कि तमाम दलित स्त्रियों ने उन्हे स्वीकार किया तथा उनसे अपने मन की व्यथा कहती थी। अपने निजी एवं सार्वजनिक समस्याएं खुलकर कहती थी। मादक द्रव्यों की लत, शराब खोरी, पत्नियों पर हिंसा जैसे मुद्दों को लेखिका ने बड़ी गम्भीरता के साथ उठाया है। स्त्री जीवन में जिन समस्याओं को लेखिका ने स्वयं झेला हैतथा स्त्रियों को लेकर जो सवाल उठाए गए हैं वह अत्यंत अहम है। नारीदशा की ओर संकेत करते हुए मृदुला गर्ग कहती हैं कि- "बीसवीं सदी के उग्र नारीवाद ने मातृत्व को स्त्री के पांव की बेड़ी बतलाकर एकदम विपरित पूर्वाग्रह को जन्म दिया। गर्भपात के अधिकार को नारी स्वातंत्रय का घटक मान लिया गया।"[28]

ये है बाँम्बे मेरी जाँ- में लेखिका ने मुम्बई जैसे महानगर की स्त्रियों का जायजा लिया है। देश की धनी-मानी नगरी मुम्बई भले हो लेकिन आए दिन स्त्रियों की दशा का जो ग्राफ दिखाई देता है वह चौकाने वाला है। वहा महिला स्वास्थ्य की स्थिति, उनके परिवारों की समस्या तथा मुम्बई नगर में सात टापुओं का वर्णन लेखिका ने इसमे किया है। मुम्बई की झोपड़ पट्टियों में दिन गुजार रही स्त्रियों का जीवन बदतर दिखाई देता है। उनके पास न रोजगार है, न पैसे। भले ही वहाँ स्वास्थ्य सुविधाएं उच्च हो मगर ये सुविधाएं उन गरीब औरतों तक नही पहुंच पाती।

तमसो मां ज्योतिर्गमय- में महाराष्ट्र के गढ़चिरौली नामकक्षेत्र की समस्या को अपने सर्वे का विषय लेखिका ने बनाया है। वहाँ जाकर डा0 बाग के माध्यम से जानकारियां इकट्ठी की। डा0 बाग की पत्नी ने बताया कि एक बार इनसे खुलकर पूछिए और यदि ये बताने लगे तो फिर बहुत समस्याएं सामने आएगी। इनके यौन रोगों की समस्याएं डाक्टरों के द्वारा दूर जरुर की जाती हैं फिर भी ये खुलकर बताने में शर्माती हैं। '**करक करेजे माह'** नामक लेख अंतिम लेख है जिसमें नारीवाद की स्पष्ट छवि दिखाई देती है। लेखिका ने शीर्षक भी बहुत सोच-समझकर बनाया है। इसमे उदयपुर का दौरा शामिल है। (27-29) मार्च का जीवन सर्वे में तथ्य परक प्रस्तुत है। वहाँ स्त्रियों के स्वास्थ्य की समस्याएं बहुत है। खासकर दलित वर्ग की औरतें जिनको जानकारियाँ भी नही है तथा डाक्टर या नर्स कभी-कभी आते है। ऐसे क्षेत्र में औरतों को स्वास्थ्य का लाभ कैसे मिलेगा? मृणाल पाण्डे कहती हैं कि जब मैने सरकारी नर्स के बारे में परताराम जैसे व्यक्ति से पूछा तो वह बताया कि- "माह में एकाध बार वह गांव घूम जाती हैं। घरों में तो जाती नहीं। गांव का दौरा भी उसके लिए एक खानापूर्ति के समान होता है। गांव की सरहद में आते ही वह परिवार नियोजन की सामग्री किसी को सौंप देती है। महिलाओं को बन्ध्याकरण के बारे में थोड़ा उकसावा देगी और उसके बाद वह गई-वह गई। ना, वह बन्धयाकरण का आपरेशन करातीहै क्योकि उसे इसका प्रशिक्षण नही दिया गया है। डाक्टर हो भी तो किसी स्थानीय केन्द्र पर उपकरण नही है।"[29]

मृणाल पाण्डे का है यह सर्वे नही बल्कि वास्तविक भारत में स्त्रियों के विकास का आइना है। स्वास्थ्य, शिक्षा तथा रोजगार में उनको भरपूर अवसर उपलब्ध नही है। ऐसे कई मुद्दों को लेकर लेखिका ने गम्भीर मंथन किया। नारी विमर्श के ये पहलू अन्य लेखकों/लेखिकाओ के यहाँ कम मिलते है यही कारण है कि मृणाल पाण्डे का नारी विमर्श स्त्री विषय की पड़ताल ही नही करता बल्कि उनकी गहरी समीक्षा भी करता है। स्त्री मुद्दों की ऐसी तस्वीर का मूल्यांकन आलोचकों एवं साहित्यकारों के लिए एक सवाल बन जाता है। औरतों की सूनी दुनियां एवं उनकी तड़प का जो हृदय विदारक विवरण लेखिका ने दिया है वह आज के नारीवाद की वास्तविक रीढ़ है।

(5) स्त्री लम्बा सफर-

इस पुस्तक में छोटे-छोटे विचारात्मक लेख है जिसमे नारी दशा, नारी सुरक्षा तथा महिला सशक्तिकरण की बात की गई है। घर-परिवार से लेकर संसद तक स्त्रियों ने जो भागीदारी निभायी है उसमे ग्रामीण औरतों की तादात बिल्कुल कम है। शहरी और कस्बाई औरतों में भले चेतना जागृत हुई है परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएं अबभी इससे दूर हैं। तमाम सामाजिक बन्धनों एवं पाबंदियों के बीच ग्रामीण औरतों के दर्द एवं मजबूरियों को कौन देखता है? '**संसद में एक बार फिर असत्यनारायण की जै**' नामक लेख महिला आरक्षण बिल तथा संसद में महिलाओं की भागीदारी को दर्शाता है। यह लेख भले ही महिला राज की स्थापना के लिए भले ही लिखा गया हो

कोई नही चाहेगा कि कोई महिला स्मृति इरानी, सानिया मिर्जा और किरण बेदी बने। फिर भी यह जानना भी तो आवश्यक हो जाता है कि देश की आधी आबादी की प्रतीक महिला शक्ति तथा उसकी क्षमता का विकास किस स्थान पर बाधित हो रहा है? महात्मा गांधी और स्वामी विवेकानन्द ने जिस महिला सशक्तिकरण की बात की थी अब वह कहाँ छिप गया? भक्ति दिवानी मीरा और रानी लक्ष्मीबाई ने जिस परम्परा को मजबूती दी वह अंदाज महादेवी वर्मा के बाद किस स्तर पर आगे बढ़ रहा है? ऐसे नारी विमर्श की पहचान के लिए साहित्य में स्त्रियों की क्या भूमिका है? इसकी पहचान करने के लिए यह लेख सर्वोत्तम है।

घरेलू हिंसा, यानी जबरा मारे भी और रोने भी न दे- नामक लेख में लेखिका ने यह दर्शाया है कि घर की जिस चहारदीवारी में स्त्री सुरक्षा की बात की जाती है परन्तु यह कोई नही परखने की कोशिश करता कि सबसे ज्यादा स्त्रियां हिंसा का शिकार या मानसिक-शारीरिक शोषण काशिकार घर के अन्दर ही होती हैं। बड़े पद प्राप्त लोगों या अभिनेताओं के लड़को या चहेते के द्वारा गरीब या झुग्गे झोपड़ियों में कैद स्त्रियों पर जो अत्याचार होते हैं, ऐसे कितनों का पुलिस के रजिस्टर, मीडिया, अस्पतालों के रजिस्टर में कितना लेखा-जोखा होता है, यह मालूम करने की जरुरत है? देश में हर वर्ष घरेलू हिंसा का शिकार औरतें घर छोड़ने या आत्म हत्या करने को विवश हो जाती हैं। नारी विमर्श के ऐसे उपादानों को तलाशते हुए मृणाल पाण्डे कहती हैं कि- "विवाह के बाद घर की चहारदीवारी के भीतर का

पांरम्परिक संसार एक ऐसा संसार है, जिसमें विवाहिता को अपनी पूर्व अस्मिता खोकर रहना होता है। नहीं पटती तो अब-तब वे या तो (बगावत कर) बाहर कर दी जाती थी या घर के सत्तावान स्त्री-पुरुषों के तलुए सहलाकर भीतर ही भीतर सुलगती रहती थीं।"[30]

लोहे का स्वादः सनद लोहार और घोड़े की- नामक शीर्षक में मीडिया में आई खबरों में स्त्रियों की खराब स्थिति तथा उनके विकास की स्थिति को मापा गया है। वही काँच की अदृश्य छत और चिपचिपी जमीन के बावजूद प्रगति में ग्लोबलाइजेंसन के दौर में नारी की भूमिका तथा सरकारी क्षेत्रों में नारी विकास की चेतना को परिभाषित किया गया है। लेखिका ने बताया है कि लोगों में यह धारणा है कि कामकाजी महिलाओं से व्याह करना जोखिम उठाना है। उनसे विवाह करने का मतलब है कि उनके खिलाफ न जाना। यदि वे दबाव में आई तो तलाक दे देगी। इतना ही नही कामकाजी औरतें बच्चे पैदा करने की इच्छा भी नही रखती। यदि बच्चे हो भी गए तो उन्हे लेकर वे घर में लेकर नही बैठेगीं।

पितृसत्तात्मक सैन्य ताकतों की नक्कू-कातर प्रतिहिंसा में अमेरिका की तरह इजरायल, पाकिस्तान जैसे देशों की पितृसत्तात्मक सोचको दिखाया गया है। सिगमंड फ्रायड के विचारों में नारी की क्या अहमियत है तथा अपने देश में प्राचीन काल मेंस्त्रियां भले ही विदुषी रही हों लेकिन लोगों की अवधारणा अब स्त्रियों के प्रति उत्तम नही। इन सबका मूल्यांकन **फायड : डेढ़ सौसाल बाद एक ईमानदार पड़ताल** में की गयी है। जेसिका लाल कांड

के आइने में हमारा ईमान' जैसे लेख में ताकतवर अपराधियों की चर्चा है जो समाज में अराजकता फैलाकर स्त्रियों को धमकाते हैं, उनका शोषण करते हैं। ऐसे अपराधी कानून भी नही मानते। जेसिका कांड के बाद उसकी जांच भी नही हुई, यहाँ तक कि अदालत से भी उसके परिवार का भरोसा उठ गया था। आज भी तमाम ऐसी घटनाएं है जो छिपा दी जाती हैं जिनकी जांच परख नही होती। स्त्री हत्या के कानून या दंड, हत्यारों के लिए नही होते केवल आम आदमी के लिए बने होते है।

सार्थक संवाद: एक राष्ट्रीय जरुरत तथा अधूरी कामनाओं के वन में भटकती एक कवयित्री- में आजाद भारत की महिला आबादी दरअसल कितनी दयनीय, उपेक्षित हो रही है, यह देखने योग्य है?

सच्चे सुधार कासही रास्ता कहीं और खोजना होगा- नामक शीर्षक में पिछड़ेपन गरीबी और अशिक्षा पर व्यंग्य किया गया है। पिछले कुछ वर्षो से जिस तरह से भारत की आबादी बढ़ी है उसमें भी महिलाओं की भागीदारी आधी आबादी का है, परन्तु शिक्षा एवं उनकी सम्पन्नता में जो गिरावट आई है वह महिला विकास के ग्राफ को कम करता जा रहा है। स्त्रियों के काम की महत्ता लड़कियों की नैसर्गिक प्रतिभा और परिवार में उनको वास्तविक अधिकारों एवं कामों से वंचित रखा जाता है। यह बात अलग है कि स्त्रियों की विश्वसनीयता बढ़ाने के लिए आज स्त्री सुरक्षा तथा महिला सशक्तिकरण की जो नकली बंदूक चलाई जा रही है वह स्त्रियों के पक्ष में नहीं है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था या भूमण्लीकरण के दौर में आज बाजारों

में जो विज्ञापन आ रहे हैं उसमे स्त्री को ही दिखाकर पैसे वसूले जा रहे हैं। हर वस्तु की गुणवत्ता तथा कीमत को उनके माध्यम से उच्च दिखाया जा रहा है। छोटे सामानों से लेकर गोरेपन के लिए क्रीम तथा रंगीन स्कूटर आदि की बिक्री तक स्त्री विज्ञापनों का इस्तेमाल कर मार्केट में लूट मची है, इसके बदले स्त्रियों को कम पैसे भी मिलते हैं। यहां तक कि सामान की बिक्री बढ़ जाने के बाद उन्हे विज्ञापनों से बाहर कर दिया जाता है।

आधी दुनिया का लम्बा सफर- पश्चिमी नारीवाद की मनोभूमि को लेकर लिखा गया है। विदेशों में जो स्त्रियों की स्थिति है उसके विपरीत भारत में स्त्रियों केअधिकार एवं उनके आस्तित्व में बढ़ोत्तरी कम हुई है।वैचारिक रुढ़ियों एवं मान्यताओं को दरकिनार करते हुए नारी विमर्श की सही पहचान करने वालायह लेख वर्ष 2009 में स्त्री विमर्श के सही पाठ की परख है। स्त्री विचारों का मोल भले ही सेंसेक्स की तरह घट रहा हो लेकिन उनके काम-काज तथा कालजयी लेखन का सफर जो जारी है वह उन्हे उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित करता है।

लज्जा से द्विखण्डिता तक सेंसर ही सेंसर तथा शिक्षित बेरोजगार स्त्रियां जल बीच मीन, पियासी- नामक लेखों में प्रसिध्द लेखिकाओं जैसे तस्लीमा नसरीन, सलमान रुसदी, नजरुल इस्लाम आदि को सियासी गलियारों के बीच में ढकेल दिया गया हैं तथा शिक्षित बेरोजगार स्त्रियां भारत के औपचारिक उद्योगके क्षेत्र में अपनी क्षमता तलाश रही हैं उनकी भागीदारी और कार्य योजना दोनों की गहरी उपेक्षा हो रही है। नारी मन की इन

अकुलाहटों के संदर्भ में मन्नू भण्डारी कहतींहैं कि- "मैं नारी को उसकी घुटन से मुक्त कराना चाहती हूँ, उसमें बोल्डनेस देखना चाहती हूँ और बोल्डनेस हमेशा दृष्टि में होना चाहिए वर्णन में नहीं---मनुष्य अपने गुणों से भगवान हो जाता है। उनकी नारी, देवी और दानवों के बीच टकराती हुई पहेली नहीं वरन् हाड़ मांस की मानवी है।"[31]

बातों बातों में जेंडर राजनीति की झलक तथा राष्ट्रपति चुनाव कुछ सन्दर्भ कुछ निहितार्थ- में स्त्रियों की धारणा तथा सामाजिक भ्रांति का चित्रण है। **यौन शिक्षा पर बेवजह बेवक्त का लट्ठम-लटठा** और **सेज बिछाई जतन से औरत को दिया भगा** में स्त्री शक्ति तथा औरतों की बेदखली में समान और घरों के भीतर दोयम दर्जे की स्थिति बना डाली है, इस विषय पर गहरी चर्चा है। फिल्मी दुनिया की अभिनेत्रियों तथा **विश्व बैंक की रिपोर्टों का हवाला मसीहा को खोजता एक बीमार स्वास्थ्य तंत्र तथा ग्लोबल गांव में गवार और नसली छूआछूत** में दिखाया गया है**। 'पर्दे के मुद्दे पर बेपर्दी होता पश्चिमी उदारवाद** में स्त्री के व्यक्तित्व की झांकी है। स्त्रियों को मानसिक प्रताड़ना तथा उनके नेक दिल की कड़वाहटों का जिक्र '**स्त्री और कानून**' नामक लेख में है। गाँव में पंचायतीराज में एक तिहाई भागेदारी औरतों की जमात में जिस स्तर पर एक दुर्लभ एकता और पूर्णता का एहसास ला रही है उसे उसी भाषा में समझना होगा।

'आधुनिक होती स्त्री का वास्तविक रुप 'भज्जी क्या तुमने ठीक किया'- नामक लेख में मिलता है। महिला पत्रकारों की स्थिति तथा सशस्त्र स्त्रीसे कौन करता है? इन दोनों लेखों में महिलाओं की विडंबना, सुविधाएं तथा लोकनिन्दा पर विस्तृत चर्चा है। **'एक दिन ऐसा आएगा जरुर'** नामक लेख में भारत में स्त्रियों की सत्ता में सहज भागीदारी तथा विधायिका में उनकी भूमिका को लेकर विवरण प्रस्तुत किया गया है। निश्चित ही एक वक्त आएगाँ जब महिलाओं की सार्वभौम भागीदारी 33% नहीं 50% होगी और योजनाबध्द तरीके से न्यायपालिका विधायिका कार्पोरेट दुनिया शिक्षा, स्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में स्त्रियों की भूमिका अहम रहेगी। नारी विमर्श की पड़ताल के बाद केटमिलेट की बात सार्थक सिध्द होती है कि- "अधिकतर नारियों के संदर्भ, उसकी समस्या पर पुरुष सोचना विचारना नही चाहता। नारी को अपनी खामोशी तोड़नी होगी, जिन अत्याचारों को नारी ने आदिकाल से सहा है, उसके बारे में दुनिया को बताना होगा। आखिर पुरुषों को क्या पड़ी है जो वे इन ओढ़ी गई भूमिकाओं को समझने की चेष्टा करें।"[32]

(6) ध्वनियों के आलोक में स्त्री-

प्रख्यात लेखिका मृणालपाण्डे की पुस्तक 'ध्वनियों के आलोक में स्त्री' संगीत के क्षेत्र में अतुलनीय एवं स्त्री विमर्श की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण पुस्तक है। संगीत की ध्वनियों में अपनी वेदना का राग अलाप रही स्त्री सम्पूर्ण मानव समाज को अपने सुरों के सुनने पर मजबूर कर देती है,यह एक वेदना ही नही दुनिया की आधी आबादी कही जाने वाली स्त्रियों की टीस है, कसक है,जहाँ कल्पना का

कोई स्थान नही है। यह कृति संगीत जगत का दिलचस्प चिट्ठा है जो अनदेखे-ओझल वृतान्तों का आकलन है। इस में इन गायिकाओं-गवनहारियों के जीवन संघर्ष की कहानी है जिनके सुर और संगीत का दृष्य हमारे देश की औरतों के सामने है, लेकिन स्त्री होने के कारण जिन अपने सभ्यसमाज की कथित कुलीनता के दाय रे में जिन कठिनाइयों का उन्हे सामना करना पड़ा, उन प्रसंगों की कोई चर्चा नही करता। अपने समय में मशहूर गायिकाओ, संगीत के क्षेत्र में नाम कमाने वाली स्त्रियों का लम्बासफर अर्थात गौहरजान से लेकर बेगम अख्तर तक तथा मोघूबाई से लेकर गंगूबाई हंगल तक के कलाकारो की एक लम्बी सूची देखने को मिलती है। यह बात अलग है कि पुरुष संगीत कारों एवं गायकों के आगे स्त्रियों को कम आका जाता था मगर स्त्रियों ने अपनी प्रतिभा केबल पर संगीत की ध्वनियों को ऐसा सुनाया कि बाद में पुरुष समाज ही उनसे संगीत की शिक्षा लेने लगा। आज भी कई संगीत विद्यालय में तथा गायकी के क्षेत्र में स्त्रियों ने उच्च स्थान प्राप्त किया है। यह कहना उचित होगा कि मृणाल पाण्डे ने इस पुस्तक में सामाजिक, सांस्कृतिक, तथा वैचारिक दीवार की उस दरार पर रोशनी डाली है जिसका भरना अबतक बाकी है। इतने बेहद प्रसंगो कोलेकर आत्मीयता केसाथ उल्लेखकिया है कि लगताहै कि यह पुस्तक स्त्री जगत में यह एक रिपोर्ट है।

इस पुस्तक में लेखिका ने उन संगीत साधक स्त्रियों के जीवन चरित्र का चित्र खीचा है जिनको कला का ज्ञान भी था तथा उचित अनन्त प्रतिभा थी फिर भी दर-दर ठोकरें खाना पड़ा, इसे ही स्त्री की नियति कहते हैं। संगीत गायिकाओं एवं गवनहारियों के वर्णन के माध्यम से संगीत के क्षेत्र

में स्त्री की सहभागिता के सुर सामने आए है लेकिन स्त्री होने के कारण अपने समय की घड़ी से बाहर न निकल सकी, शोषण की चहारदीवारी में उनकी दुनियां समाप्त होने लगी। स्त्रियों को पग-पग पर अवरोध झेलना पड़ा फिरभी उस अंधेरे का कोई जिक्र नही करता। बेगम हजरत, गंगूबाई, मोघूबाई, गौहरजान से लेकर रेश्मा तक जैसी स्त्रियों की जो सूची मिलती है। इन कलाकारों के माध्यम से लेखिका ने अकल्पनीय संगीत साधकों के संगीत साधना को अतुलनीय बनाने का प्रयास किया है।

एक कठिन समय में गुरू-स्मरण नामक शीर्षक में लेखिका ने अपने गुरू जया गुप्ता का वर्णन किया है। उनकी गुरू अपने पति की मृत्यु के बाद उत्तराखण्ड के सूदूर अंचल में नौकुचियाताल को अपना घर बना लिया था। उनके गुरू के पास अलग-अलग अवसरों पर गाए जाने वाले गीतों का संकलन था। उन्होने वहां की स्त्रियों के साथ मिलजुल कर समय बिताने में रुचि रखती थी, उनकी चित्रकारी तथा कला से प्रभावित होकर उनका प्रोत्साहन करती थीं। आम आदमी का जीवन आज बहुत कठिन हो गया है। जीवन मेंजब कठिनाई आती है, तब जीवन जीना मुश्किल हो जाता है। जीवन के ऐसे दुख दर्द का अंकन ध्वनियों के आलोक में वर्णित है। बेगम अख्तर और मोघुबाई जैसी संगीत साधक स्त्रियां जीवन के ऐसे दौर से गुजर रही थी जहाँ उन्हे मेहनत तो करना ही पड़ा साथ ही बदनामी भी मिली। इन संगीत की मल्लिकाओं के गायकी की वाह-वाह करने वाले लोग कम नही थे परन्तु पुरुष गायकों की अपेक्षा इन्हे कम आंका गया। इनमें

कला की कमी नही थी, नाचने-गाने से लेकर संगीत की सभी कलाएं इनके पास थी लेकिन स्त्री होने के नाते इन्हे कमजोर समझा गया।

भारत हो या पश्चिम हर जगह संगीत का बड़ा महत्व था बंगाल भी संगीत का केन्द्र था परन्तु भारत के हर कोने में संगीतकारों का दल अपना राग प्रसारित करने में लगा था। बेगम अख्तर के गीत सुनकर महफिलों में हिन्दू रोने लगते थे और पंडित ओंकार नाथ के गायन सुनकर हर मुसलमान की आंखे गीली हो जाती थी। 19वीं-20वीं सदी में जो समाज सुधारक स्त्री शिक्षा के पक्ष में थे वे मानते थे कि यदि स्त्रियों को शिक्षा दी जाय तो एक कुनबा शिक्षित हो सकता है। कला के इतिहास में एक तरफ महिला कलाकारों का महत्व तथा उनके योगदान को कम समझना महिलाओं को उपेक्षित करना था। महिलाओं के श्रम तथा दयनीय स्थिति का जिक्र करते हुए मृणाल पाण्डे कहती हैं कि- "इस लिये काफी लम्बे समय तक करोड़ो पुत्रवती, सुहागवती महिलाओं की सांगीतिक प्रतिभा का इकलौता निकास मार्ग सुबह उठकर कपड़े धोने, पानी खीचने, चक्की पीसने, रोते बच्चे को सुलाने या घर में मनाए जा रहे नाना संस्कारों की घड़ी में सुख-दुख से आंदोलित पारम्परिक लोकगीत कभी एकाकी और कभी समवेत स्वरों में गा उठना ही बना रहा।"[33]

संगीत अभिव्यक्ति का सहज माध्यम है, यह एक आध्यात्मिक रुप भी है। अपने यहाँ औरतों को आगे बढ़ाने में उनके राह में मुश्किलें है। वह सही से हँस भी नही पाती उनके हँसने पर भी पाबन्दी है। रोती भी है तो

मुँह छुपाकर। इन सब कठिनाइयों के बावजूद महिला संगीतकारों ने जो अपने विजय का परचम लहराया वह अभिनन्दन के योग्य है। मीरा, मोघूबाई, गोहर जान, मलकाजान, किशोरी अमोनकर, शिवानी, कृष्णा सोबती और अमृता प्रीतम जैसी योग्य महिलाओं ने जो कठिनाई की डगर पार करके आगे बढ़ी और संसार में प्रसिध्द हुई। मसहूर और स्वाभिमानी मल्लिका और गौहर के बाद मुन्नीबाई का नाम आगे आता है। उनका जीवन सबके सामने एक कारुणिक गायन की अभिव्यक्ति करने वाले महिलाओं की श्रेणी में आता है। जूनागढ़ की जानी-मानी गायिका जगमगीबाई की बेटी थी मुन्नीबाई। मुन्नीबाई जब संगीत के क्षेत्र में आगे बढ़ी तब उनको कई लोगों के विरोध झेलने पड़े तथा घर की समस्त जिम्मेदारी अपने कन्धों पर उठाना पड़ा। उस्ताद अमीर खाँ से प्रेम होने पर ये दिल्ली आ गई लेकिन जल्द ही अलगाव हो गया। बाद में बदनामी तथा विरोध सहन करते हुए मुन्नीबाई अचानक बनारस जाकर साधु हो गयी और बाद में गंगा में समाधि लेली। इस तरह गानेवालियों के साथ बहुत दुर्व्यवहार हुए। पहले इनका विरोध किया गया फिर इनको प्रेमजाल में फसाकर बदनाम किया गया और अन्त में इनकी जिन्दगी समाप्त हो गयी। हमारी सामाजिक स्त्रियां सदैव से लोक कल्याण में तत्पर रही फिर भी उनका शोषण होता रहा। स्त्री जीवन के महत्वपूर्ण तथ्यों की पहचान करते हुए लेखक राजेन्द्र यादव कहते हैं कि- "विडम्बना है कि नारी को अगर स्वतंत्र होना है तो वेश्या बनने के

सिवा कोई रास्ता नही है, तभी वह जी सकेगी। वरना उसकी लगाम पिता, पति पुत्र के हाथ में है।"[34]

संगीत की दुनियां में गंगूबाई का भी नाम आदरके साथ लिया जाता है। उन्होने सामाजिक प्रताड़ना सहनकर संगीत की दुनियां में अपना कदम बढ़ाया। बीसवीं सदी के दौर में संगीत की परम्परा को आगे बढ़ाने में महाराजा सवाजीराव का महत्वपूर्ण योगदान रहा। इनकी शिक्षा व्यवस्था तथा संगीत की शिक्षा व्यवस्था को भुलाया नही जा सकता। कहा जाता है कि इन्होने संगीत की शिक्षा दिलाने के लिए संगीत विद्यालय की स्थापना की। बड़ौदा के शासक महाराजा सयाजीराव ने अपने राज्य में लड़कियों के लिए संगीत की कक्षाएँ शुरु करवाकर शिक्षक के रुप में उस्ताद फैयज खां साहिब और उस्ताद अब्दुल करीम खाँ को प्रचुर वेतनमान देकर शिक्षा की व्यवस्था की। महाराजा साहब ने स्त्री शिक्षा पर बहुत जोर दिया। उस जमाने से महिलाओं को सस्ती शिक्षा देना शुरु किया तथा महिला सशक्तिकरण की नींव रखा। आज उन्ही के नाम से स्थित महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय बड़ौदा स्त्री शिक्षा का केन्द्र है। हर वर्ग को सस्ती फीस में अच्छी सुविधा देने वाला यह विश्वविद्यालय अपने इतिहास को दोहराता है।

संगीत रिकार्ड की दुनियां में स्त्री-नामक लेख में हीराबाई बढ़ोकर के विषय में महत्वपूर्ण सवाल किए गए है। इसके अलावा जानकीबाई छप्पन छुरी, इलाहाबाद की मुन्नीजान, पानीपत की मिस अमीरजान, बनारस की

शिवकुअरिबाई, दिल्ली की मिस दुअन्नीजान, बुलन्दशहर की नजीरजान, आदि के नाम रिकार्डिंग की दुनियां में नाम अमर हैं। केशरबाई केरकर ने भी जीवन की विसंगतियों को पार कर अपना नाम संगीत की दुनियां मेंजोड़ा। संगीत की दुनियां में आम स्त्रियों का नाम भी महत्वपूर्ण है। वे गाती रहीं लेकिन उनकों प्रोत्साहन करने के बजाय उन्हे किनारे कर दिया गया। उनकी गायकी तथा कष्ठों की सुरसाधना ने लोगों को इतना मोहित कर लिया कि आज भी उनका नाम आसानी से लोगों के होठों पर आ जाता है। ऐसी महिलाओं में रेश्मा का नाम आता है। संगीत के माध्यम से रोजी-रोटी चलाने वाली ये औरतें अपने गीतों के बल पर आज कई वर्षों के बाद भी मसहूर हैं। आज इस दुनियां में वे भले हीन हो लेकिन उनके गानों की धुन लोगों को सुनने को मजबूर कर देती है।

फारसी थियेटर भी रंगमंच के साथ संगीत के लिए दुनियां भर में प्रसिध्द रहे। मिस गोंहर तथा सुग्गनबाई ने फारसी रंगमंचो से भी जुड़ी रही। ये स्वर साधिकाएं अपनी बोली में लोगों का मनोरंजन करती रही तथा अपने अन्दर के दर्द को समाज के सामने रखा। जब तक जीवित रही तब तक ये अपनी गायकी के बल पर महिलाओं की अग्रगण्य बनी रहीं। आज ये महिलाएं नही है फिर भी इतिहास के पन्नों पर उनका नाम दर्ज है।

अन्य विधाएँ-

पत्रकारिता- मृणाल पाण्डे मूलतः पत्रकार हैं। पत्रकारिता जगत में उनका नाम बड़े गौरव का सूचक है। एक वरिष्ठ पत्रकार होने के कारण उन्होंने अपने साहित्य में सर्वेपरक, विश्लेषण करके साहित्य को रचा।इनके साहित्य में पत्रकारिता की झलक दिखाई देती है। जन-जन के विचारों को, सभ्यता, संस्कृति एवं रीति-रिवाजों की परिचायक पत्रकारिता उनके साहित्य के साथ इस प्रकार जुड़ गयी है, लगता है कि साहित्य और पत्रकारिता में अभिन्न सम्बन्ध है। पत्रकारिता की व्याख्या करते हुए श्री प्रवीण दीक्षित ने कहा है कि- "एक ओर यह व्यवसाय है, तो दूसरी ओर समाज की सेवा एवं लोक चेतना को जागृत करने का सर्वोत्तम साधन है, दायित्व बोध बढ़ाने वाला माध्यम है, अन्याय के खिलाफ जंग छेड़ने का हथियार है, सामान्य जनता तक घटित घटनाओं का ज्ञान पहुंचाने का विद्यालय है और किसी भी प्रकार के साम्राज्यवाद के विरुध्द पवित्र युध्द का संचालन करने वालों की एक प्रमुख प्रेरणा भी है।"[35]

मृणाल पाण्ने ने कई पत्रों का सम्पादन भी किया जो इस प्रकार है-

(1) दैनिक हिन्दुस्तान-

1936 ई0 में लखनऊ में कांग्रेस अधिवेशन के अवसर पर राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित होकर दिल्ली से राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक हिन्दुस्तान का प्रकाशन शुरु हुआ। इसके सर्वप्रथम सम्पादक सत्यदेव विद्यालंकार हुए। सत्यदेव 1936 से 46 तक इसके सम्पादक रहे। इस दौरान इन्होने राष्ट्रीय

आन्दोलन तथा राष्ट्रीय चेतना को प्रसारित करने का कार्य किया। 1946-63 तक मुकुट बिहारी शर्मा इसके सम्पादक रहे। लगभग 17 वर्षों की पत्रकारिता में श्री विहारी जी ने मानवीय जीवन की महत्ता तथा जन कल्याण की भावना को प्रसारित किया।

इसके अलावा मृणाल पाण्डे के 'अमर उजाला' में सम्पादकीय पृष्ठों पर कई वैचारिक लेखों की छाप दिखाई देती है।-

(1) बीस करोड़ उम्मीदें (5 सितम्बर 2010)

(2) राजनीति में पर्युषण पर्व (4 सितम्बर 2011)

(3) घरेलू हिंसा के बढ़ते हाँथ (2 अक्टूबर 2011)

(4) उच्च शिक्षा पर एक नजर (16 अक्टूबर 2011)

(5) एक असमय बिखरी क्रान्ति (8 जनवरी 2012)

मृणाल पाण्डे ने कई पत्रिकाओं का भी सम्पादन किया-

जैसे-(2) वामा (पत्रिका)-

यह महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण पत्रिका थी। फरवरी 1984ई. में प्रकाशन शुरु हुआ। इसके सम्पादकीय पृष्ठों में मृणाल पाण्डे ने यह भी कहा कि हमारी निरन्तर यह कोशिश रहेगी कि पत्र के पठन पाठन, खोजबीन एवं विचारशीलता के नए आयाम सामने रखती रहें और इस भ्रम को मिटा सके कि या तो अबला जीवन की दुख भरी कहानी होती है या वैभव समुद्र के बीच तैरने वाली गृहिणियों के लिए गढ़ा गया एक रंग-बिरंगा रुमानी

स्वप्न लोक। 90 पृष्ठों की इस पत्रिका का मूल्य 400 रु. था। नेशनल प्रिटिंग प्रेस दिल्ली से प्रकाशित पत्रिका में श्री पाण्डे की सहयोगी गगन मिल, सुनीता पन्त, मिनी कपूर थी।

(3) कादम्बिनी-

इस पत्रिका का प्रकाशन श्री बालकृष्ण राव ने नवम्बर 1960 ई .में इलाहाबाद से किया। 1962 ई. में इसके सम्पादक रामानन्द बने। मार्च 2003 से 2009 तक मृणाल पाण्डे इसकी सम्पादक रही। कादम्बिनी साहित्य की पत्रिका रही है। हिन्दी सेवियों एवं साहित्यकारों के लिए यह पत्रिका सहायक सिध्द हुई है। समय-समय पर इस पत्रिका में नाटक, निबन्ध, उपन्यास, यात्रा संस्मरण प्रकाशित होते रहे हैं।

(4) नन्दन (पत्रिका)- इस पत्रिका का प्रकाशन नवम्बर 1964 ई0 में दिल्ली में हुआ। इसके प्रथम सम्पादक राजेन्द्र अवस्थी थे। मृणाल पाण्डे भी इसकी सम्पादक रही। यह एक बाल पत्रिका थी। यह पत्रिका बड़े लेखकों एवं बच्चों को प्रोत्साहित करती रही। इसमे छपे रोचक लेख एवं नटखट स्वभाव वाले विचार सदैव लोगों को लुभाते रहे। ऐसा कौन सा मन था जो इसपत्रिका से न जुड़ा हो।

मृणाल पाण्डे ने कई पुस्तकों का अनुवाद भी किया तथा कई पुस्तके अंग्रेजी में भी उपलब्ध हैं । इनके विचारोत्तेजक लेख नारी विमर्श के नये अध्याय को शुरू करते हैं।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :

1. पाण्डे मृणाल-परिधि पर स्त्री (निबन्ध), (1946), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-06
2. पाण्डे मृणाल-परिधि पर स्त्री (निबन्ध), (1946), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-15-16
3. पाण्डे मृणाल-परिधि पर स्त्री, (निबन्ध), (1946), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-32
4. सीमोन द बाउवार-स्त्री उपेक्षिता, पृष्ठ संख्या-65
5. पाण्डे मृणाल-परिधि पर स्त्री, (निबन्ध), (1946), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-40
6. पाण्डे मृणाल-परिधि पर स्त्री, (निबन्ध), (1946), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-51
7. सरला माहेश्वरी-नारी प्रश्न, पृष्ठ संख्या-43
8. प्रसाद जयशंकर-ध्रुवस्वामिनी (नाटक), पृष्ठ संख्या-87
9. पाण्डे मृणाल-परिधि पर स्त्री (निबन्ध), (1946), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-87
10. पाण्डे मृणाल- स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक (1987), राधाकृष्णा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 (भूमिका से)

11. पाण्डे मृणाल- स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 17
12. वर्मा महादेवी-श्रृंखला की कड़ियां (1999), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-23
13. भारती इंदु-आधी आबादी, पृष्ठ संख्या-17-18
14. पाण्डे मृणाल-स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीतिक, (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-37
15. देश पाण्डे वैशाली-स्त्रीवाद और महिला उपन्यास कार, पृष्ठ संख्या-274
16. डा0 उमरे करूण-स्त्री विमर्श साहित्यिक तथा व्यावारिक सन्दर्भ, पृष्ठ संख्या-03
17. पाण्डे मृणाल-स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-69
18. पाण्डे मृणाल-स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-83
19. सं डा0 भारद्वाज शैलजा-हिन्दी साहित्य में युगीन बोध पृष्ठ संख्या-454
20. पाण्डे मृणाल-स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-99

21. पाण्डे मृणाल-स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-113
22. पाण्डे मृणाल-स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, (1987), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-124
23. नसरीन तस्लीमा-औरत के हक में, पृष्ठ संख्या-168
24. पाण्डे मृणाल-जहां औरतें गढ़ी जाती है, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-50
25. पाण्डे मृणाल-ओ उब्बीरी, (2003), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-13
26. संचारिका संयुक्तांक, जुलाई, अगस्त, सितम्बर (2008), पृष्ठ संख्या-27
27. अंसारी एम.ए.-राष्ट्रीय महिला आयोग और भारतीय नारी, पृष्ठ संख्या-239
28. मृदुला गर्ग के साथ तरसेम गुजरात की बातचीत, कथादेश, जून 2013, पृष्ठ संख्या 14
29. पाण्डे मृणाल-ओ उब्बीरी, (2003), पृष्ठ संख्या-245
30. पाण्डे मृणाल-स्त्री लम्बा सफर, (2012), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-19
31. डा0 शर्मा सुशील-आधुनिक समाज में नारी चेतना, पृष्ठ संख्या- 196
32. केटमिलेट का लेख, गगनांचल, (2001), अक्टूबर, दिसम्बर।

33. पाण्डे मृणाल-ध्वनियों के आलोक में स्त्री, (2015), राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-52

34. वर्तमान साहित्य, जून (2001), पृष्ठ संख्या-115

35. श्री दीक्षित प्रवीण-जनमाध्यम और पत्रकारिता, पृष्ठ संख्या-639